About the Book

यह किताब खास तौर पर UPTET पेपर-I (कक्षा 1 से 5) की तैयारी के लिए बनाई गई है।
इसमें सभी विषय—बाल विकास एवं शिक्षाशास्त्र, हिंदी, English Language, गणित और पर्यावरणीय अध्ययन—
एक ही जगह पर, नए सिलेबस के अनुसार दिए गए हैं। यह आपकी तैयारी के लिए एक बेहतरीन "वन-स्टॉप सॉल्यूशन" है।

किताब की मुख्य विशेषताएँ –

- एक ही किताब में सभी विषय UPTET पेपर-I के आधिकारिक सिलेबस के अनुसार शामिल।
- थ्योरी को आसान और सरल शब्दों में समझाया गया है, ताकि हर कोई आसानी से समझ सके।
- हर अध्याय के बाद सवाल और उनके जवाब दिए गए हैं, जिससे आपकी तैयारी मजबूत हो सके।
- 1900+ प्रैक्टिस प्रश्न जो समझ को मजबूत करने और सवाल हल करने की क्षमता बढ़ाने में मदद करेंगे।
- परीक्षा को ध्यान में रखकर तैयार किया गया कंटेंट, जिससे सही दिशा में तैयारी हो।
- यह किताब स्व-अध्ययन और प्रैक्टिस के लिए बेहतरीन है, जिससे आप खुद से अच्छी तैयारी कर सकते हैं।

चाहे आप तैयारी की शुरुआत कर रहे हों या अंतिम रिवीजन, यह गाइडबुक आपको फोकस बनाए रखने, सही प्रैक्टिस करने और UPTET पेपर-I में सफलता पाने का आत्मविश्वास देने में मदद करेगी।

अन्य महत्वपूर्ण पुस्तकें

Buy books at great discounts on: www.examcart.in | www.amazon.in/examcart |

AGRAWAL EXAMCART
Paper Pakka Facega!
CB2119

UPTET PAPER-I (कक्षा 1 से 5)
स्टडी बुक
ISBN - 978-93-6890-909-5
₹ 549

UPTET PAPER-I (कक्षा 1 से 5) स्टडी बुक
CB2119
AGRAWAL EXAMCART

AGRAWAL EXAMCART
Paper Pakka Facega!

उत्तर प्रदेश शिक्षक पात्रता परीक्षा

UPTET

PAPER-I
(कक्षा 1 से 5)

स्टडी बुक

बाल विकास एवं शिक्षाशास्त्र । हिंदी । English Language । गणित । पर्यावरणीय अध्ययन

मुख्य विशेषताएँ

1. **सम्पूर्ण थ्योरी** — UPTET के पाठ्यक्रम एवं NCERT की पाठ्यपुस्तकों पर आधारित सम्पूर्ण थ्योरी
2. **सम्पूर्ण शिक्षाशास्त्र** — सभी विषयों के सम्पूर्ण शिक्षाशास्त्र का समावेश
3. **1900+ अभ्यास प्रश्न** — 1900+ महत्वपूर्ण अध्यायवार प्रश्न

Code	Price	Pages	ISBN
CB2119	₹549	707	978-93-6890-909-5

विषय सूची

परीक्षा से सम्बन्धित जानकारी (Exam Information)

➔ **परीक्षा से सम्बन्धित महत्वपूर्ण सूचना (Important Information)** viii
(UPTET परीक्षा की सम्पूर्ण जानकारी एवं पुस्तक या किसी भी समस्या के लिए हमारा Helpline No.)

➔ **पाठ्यक्रम एवं परीक्षा पैटर्न** ix

➔ **विश्लेषण चार्ट** xiii
(विगत वर्ष के पेपर में कितने प्रश्न हर विषय के अध्याय से पूछे गये, उस का चार्ट)

सॉल्व्ड पेपर्स

➢ **उत्तर प्रदेश शिक्षक पात्रता परीक्षा पेपर-I (कक्षा-1-5) हल प्रश्न-पत्र (23-01-2022)** 1-19

➢ **उत्तर प्रदेश शिक्षक पात्रता परीक्षा पेपर-I (कक्षा-1-5) हल प्रश्न-पत्र (28-11-2021)** 20-36

बाल विकास एवं शिक्षाशास्त्र

1. बाल विकास : अर्थ, आवश्यकता, महत्व, क्षेत्र, अवस्थाएँ एवं कारण 1-27

2. अधिगम का अर्थ एवं सिद्धान्त 28-43

3. शिक्षण एवं शिक्षण विधाएँ 44-59

4. समावेशी शिक्षा—निर्देशन एवं परामर्श 60-96

5. अधिगम और अध्यापन 97-121

हिंदी

(क) हिंदी

1. अपठित अनुच्छेद 122-128

2. हिंदी वर्णमाला और वर्णों के मेल से मात्रिक तथा अमात्रिक शब्दों की पहचान 129-130

3. वाक्य रचना 131-133

4. हिंदी की सभी ध्वनियों के पारस्परिक अन्तर की जानकारी 134-140
(ध्वनियों, वर्णों, अनुस्वार, संयुक्ताक्षर, अनुनासिक एवं चन्द्रबिन्दु में अन्तर और सभी प्रकार की मात्राएँ एवं 'र' के भिन्न रूपों का प्रयोग)

5. विराम चिह्न/वर्तनी 141-144

6. विलोम, समानार्थी, तुकान्त, अतुकान्त, समान ध्वनियों वाले शब्द 145-154

7. संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया क्रिया–विशेषण एवं अव्यय के भेद 155-163
8. लिंग, वचन, कारक एवं काल 164-169
9. प्रत्यय, उपसर्ग, तत्सम, तद्भव व देशज् शब्दों की पहचान एवं उनमें अन्तर 170-178
10. मुहावरे, लोकोक्तियाँ एवं एकार्थी शब्द 179-186
11. सन्धि 187-191
12. वाच्य, समास, अलंकार, रस तथा छन्द 192-204
13. काल एवं प्रसिद्ध कवि, लेखक और उनकी रचनाएँ 205-211

(ख) भाषा विकास का अध्यापन

14. अधिगम और अर्जन 212-213
15. भाषा अध्यापन के सिद्धान्त 214-216
16. बोलने एवं सुनने की भूमिका : भाषा के कार्य 217-219
17. भाषा अधिगम में व्याकरण की भूमिका 220-223
18. एक भिन्न कक्षा में भाषा पढ़ाने की चुनौतियाँ 224-225
19. भाषा कौशल 226-230
20. भाषा बोधगम्यता में प्रवीणता का मूल्यांकन/उपचारात्मक शिक्षण 231-233
21. अध्यापन अधिगम सामग्रियाँ : पाठ्यपुस्तक मल्टीमीडिया सामग्री, कक्षा के बहुभाषायी संसाधन 234-236
22. बच्चों में पढ़ने–लिखने सम्बन्धी विकार 237-242

English Language

1. Unseen Passage 243-249
2. The Sentence 250-252
3. The Noun : Kinds of Noun 253-256
4. Pronoun 257-259
5. Verb/Modal & Syntax 260-268
6. Adjective 269-273
7. Adverb 274-275
8. Preposition 276-279
9. Conjunction 280-282
10. The Interjection 283
11. Tenses 284-290
12. Articles 291-295

13. Punctuation 296-300
14. The Formation of Word 301-307
15. Voice 308-313
16. Narration 314-320
17. The Noun : Number-Singular & Plural 321-325
18. The Noun : Gender & Case 326-330
19. Vocabulary 331-350
20. Clauses & Simple, Compound and Complex Sentences 351-357

गणित

1. संख्या पद्धति (Number System) 358-372
2. लघुत्तम समापवर्त्य और महत्तम समापवर्तक (L.C.M. and H.C.F.) 373-377
3. भिन्न एवं दशमलव संख्याएँ (Fractions and Decimal Numbers) 378-385
4. ऐकिक नियम (Unitary Rule) 386-390
5. प्रतिशतता (Percentage) 391-394
6. लाभ और हानि (Profit and Loss) 395-399
7. ब्याज (Interest) 400-402
8. ज्यामिति (Geometry) 403-422
9. मुद्रा या राशि (Money) 423-425
10. राशियाँ एवं मापन (Units and Measurement) 426-428
11. कैलेण्डर (Calendar) 429-431
12. घड़ियाँ (Clocks) 432-434
13. क्षेत्रमिति (Mensuration) 435-441
14. आँकड़ा प्रबन्धन (Data Handling) 442-450
15. गणित शिक्षण भाग–1 (Mathematics Teaching Part-1) 451-476

पर्यावरणीय अध्ययन

1. परिवार (Family) 477-479
2. भोजन, स्वास्थ्य एवं स्वच्छता (Food, Health and Hygiene) 480-486
3. आवास (Habitat) 487-490
4. जन्तु एवं पेड़ पौधे (Animals and Tree Plants) 491-504
5. हमारा परिवेश (Our Surroundings) 505-506

6. मेला (Fair) 507-510

7. स्थानीय पेशे से जुड़े व्यक्ति एवं व्यवसाय (People Associated with Local Profession) 511-518

8. जल (Water) 519-521

9. यातायात एवं संचार (Transport and Communication) 522-524

10. खेल एवं भावना (Sports and Sporting Spirit) 525-529

11. सौर मण्डल, पृथ्वी तथा भारत (नदियाँ, पर्वत, पठार, वन महाद्वीप, जनजातियाँ) 530-555
[Solar System, Earth and India (Rivers, Mountains, Plateaus, Forest Continent, Tribes)]

12. हमारा प्रदेश (उत्तर प्रदेश)–नदियाँ, पर्वत, पठार, वन और यातायात 556-560
[Our State (U.P.)–Rivers, Mountains, Plateaus, Forests and Transport]

13. संविधान एवं संयुक्त राष्ट्र (Constitution & United Nations) 561-584

14. पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी (Environment and Ecology) 585-610

15. विज्ञान सम्बन्धी विषय सामग्री (धातु एवं अधातु, ईंधन, बल, घर्षण, गुरुत्वाकर्षण बल, उत्क्षेप या उत्प्लावन बल, आर्कमिडीज का सिद्धान्त, घनत्व, आपेक्षिक घनत्व, प्रकाश) (Science Related Content) 611-624

16. NCERT (कक्षा 3 से 5) सारांश [NCERT (CLASS 3 to 5) Summary] 625-628

17. अध्यापन सम्बन्धी मुद्दे (Teaching Related Issues) 629-653

अतिरिक्त अध्ययन सामग्री ई-बुक
(Extra Study Material E-Book)

Extra Study Material ई-बुक का Content
- विगत वर्ष के 5 सॉल्व्ड पेपर्स की ई-बुक
- डिस्काउंट कूपन दिया गया है। उसका उपयोग करें और 'www.examcart.in' से हमारी किताबें सबसे अच्छे डिस्काउंट पर खरीदें।

नोट : Link Expire होने से पहले दिए गए **QR Code** को स्कैन करके आप यह **Extra Study Material E-Book** को **Download** कर लें।

ऐसी पुस्तकें जो कोई आपको बताना नहीं चाहता!

इन अनोखी पुस्तकों ने कई छात्रों को उनके पहले प्रयास में ही परीक्षा पास करने में मदद की है और हम जो कहते हैं, उसे साबित भी करते हैं—इसीलिए हर पुस्तक के कुछ सैंपल चैप्टर दिए गए हैं। हम गारंटी देते हैं कि इन्हें पढ़ने के बाद आपको समझ आएगा कि ये पुस्तकें क्यों सबसे बेहतरीन हैं और क्यों इतने सारे छात्र इनसे सफल हुए हैं।

नोट

पढ़ने के लिए, किसी भी पुस्तक के पास दिए गए **QR Code** को स्कैन करें, उसके वेबसाइट पेज पर **"View PDF"** पर क्लिक करें। अगर पुस्तक पसंद आए, तो **Extra Study Material** ई-बुक में दिया गया डिस्काउंट कूपन इस्तेमाल करें और बेहतरीन डिस्काउंट भी पाएँ!

UPTET Class 6-8 गणित (Textbook)

UPTET Class 6-8 विज्ञान (Textbook)

UPTET Class 6-8 सामाजिक अध्ययन (Textbook)

UPTET Class 1-5 गणित (Textbook)

UPTET Class 1-5 पर्यावरणीय अध्ययन (Textbook)

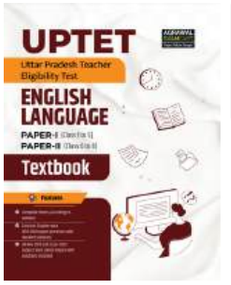

UPTET Class 1-5 & 6-8 English Language (Textbook)

UPTET Class 1-5 & 6-8 बाल विकास एवं शिक्षाशास्त्र (Textbook)

UPTET Class 1-5 & 6-8 हिंदी (Textbook)

UPTET Class 1-5 & 6-8 संस्कृत (Textbook)

UPTET Class 1-5 (Practice Sets & Solved Papers)

UPTET Class 6-8 गणित एवं विज्ञान (Practice Sets & Solved Papers)

UPTET Class 6-8 सामाजिक अध्ययन (Practice Sets & Solved Papers)

अध्याय

1

बाल विकास : अर्थ, आवश्यकता, महत्व, क्षेत्र, अवस्थाएँ एवं कारण

1. बाल मनोविज्ञान की अवधारणा (Concept of Child Psychology)

मनोविज्ञान का जन्मदाता दर्शनशास्त्र (Philosophy) ही है। आज से कुछ वर्ष पूर्व मनोविज्ञान अलग विषय के रूप में विकसित नहीं था, बल्कि यह दर्शनशास्त्र की ही एक शाखा के रूप में था। मनोविज्ञान अंग्रेजी भाषा के शब्द '**साइकोलॉजी**' (Psychology) का हिन्दी रूपान्तर है। '**साइकोलॉजी**' (Psychology) शब्द दो शब्दों के जोड़ से बना है, अर्थात् '**साइक**' (Psyche) (+) '**लोगोस**' (Logos) साइक का अर्थ है–आत्मा तथा लोगोस का अर्थ है–विज्ञान अर्थात् इसका अभिप्राय यह हुआ कि '**आत्मा का विज्ञान**'। साइक (Psyche) + लोगोस (Logos) साइकोलॉजी (Psychology) आत्मा का विज्ञान।

मनोविज्ञान के जनक → अरस्तू

गैरिट ने "मनोविज्ञान को आत्मा का विज्ञान माना है।"

वाटसन "मनोविज्ञान, व्यवहार का निश्चित विज्ञान है।"

वुडवर्थ "मनोविज्ञान, वातावरण के सम्बन्ध में व्यक्ति की क्रियाओं का वैज्ञानिक अध्ययन है।"

स्किनर "मनोविज्ञान, जीवन की सभी प्रकार की परिस्थितियों में प्राणी की प्रक्रियाओं का अध्ययन करता है। प्रक्रियाओं अथवा व्यवहार का तात्पर्य है– प्राणी की सब प्रकार की गतिविधियाँ, समायोजनाएँ, क्रियाएँ एवं अभिव्यक्तियाँ।"

वुडवर्थ के अनुसार, "मनोविज्ञान वातावरण के सम्पर्क में होने वाले मानव–व्यवहारों का विज्ञान है।"

कालसनिक के अनुसार, "मनोविज्ञान मानव–व्यवहार का विज्ञान है।"

2. बाल विकास का अर्थ (Meaning of Child Development)

'बाल विकास' से तात्पर्य बालकों के सर्वांगीण विकास से है। बाल विकास का अध्ययन करने के लिये 'विकासात्मक मनोविज्ञान' की एक अलग शाखा बनाई गयी जो बालकों के व्यवहारों का अध्ययन गर्भावस्था से लेकर मृत्युपर्यन्त तक करती है। परन्तु वर्तमान समय में इसे 'बाल विकास' (Child Development) में परिवर्तित कर दिया गया क्योंकि बाल मनोविज्ञान में केवल बालकों के व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है जबकि बाल विकास के अन्तर्गत उन सभी तथ्यों का अध्ययन किया जाता है जो बालकों के व्यवहारों को एक निश्चित दिशा प्रदान कर विकास में सहायता प्रदान करते हैं।

'हरलॉक' (Hurlock) ने इस सम्बन्ध में कहा है कि "बाल मनोविज्ञान का नाम बाल विकास इसलिये बदला गया क्योंकि अब बालक के विकास के समस्त पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है, किसी एक पक्ष पर नहीं।" बाल विकास के सम्बन्ध में अनेक विद्वानों ने अपने अलग-अलग मत दिये हैं–

क्रो एण्ड **क्रो** के अनुसार–"बाल विकास वह विज्ञान है जो बालक के व्यवहार का अध्ययन गर्भावस्था से मृत्युपर्यन्त तक करता है।"

डार्विन के अनुसार–"बाल विकास व्यवहारों का वह विज्ञान है जो बालक के व्यवहार का अध्ययन गर्भावस्था से मृत्युपर्यन्त तक करता है।"

हरलॉक के अनुसार–"बाल विकास मनोविज्ञान की वह शाखा है जो गर्भाधान से लेकर मृत्युपर्यन्त तक होने वाले मनुष्य के विकास की विभिन्न अवस्थाओं में होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन करता है।"

इस प्रकार उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि बाल विकास बाल मनोविज्ञान की ही एक शाखा है जो (i) बालकों के विकास, (ii) व्यवहार, (iii) विकास को प्रभावित करने वाले विभिन्न तत्वों का अध्ययन करती है।

3. बाल विकास की आवश्यकता (Need of Child Development)

बाल विकास अनुसन्धान का एक क्षेत्र माना जाता है। बालक के जीवन को सुखी और समृद्धिशाली बनाने में बाल–मनोविज्ञान का योगदान प्रशंसनीय है। मनोविज्ञान की इस शाखा का केवल बालकों से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध है, जो बालकों की समस्याओं पर विचार करते हैं और बाल मनोविज्ञान की उपयोगिता को स्वीकार करते हैं। समाज के विभिनन लोग बाल–मनोविज्ञान से लाभान्वित हो रहे हैं, जैसे–बालक के माता–पिता तथा अभिभावक, बालक के शिक्षक, बाल सुधारक तथा बाल–चिकित्सक आदि। बाल विकास के द्वारा हम बाल–मन और बाल व्यवहारों तथा बालक के विकास के रहस्यों को भली–भाँति समझ सकते हैं। बाल मनोविज्ञान हमारे सम्मुख बालकों के भविष्य की एक उचित रूपरेखा प्रस्तुत करता है। जिससे अध्यापक एवं अभिभावक बच्चे में अधिगम की क्षमता का सही विकास कर सकते हैं। किस अवस्था में बच्चे की कौन–सी क्षमता का विकास कराना चाहिए, इसका उचित प्रयोग अवस्थानुसार विकास के प्रारूपों को जानने के पश्चात् ही हो सकेगा। उदाहरण के लिए एक बच्चे को चलना तभी सिखाया जाए, जब वह चलने की अवस्था का हो चुका हो, अवस्था इसके परिणाम विपरीत हो सकते हैं।

बाल विकास शिक्षकों के लिए निम्न प्रकार से आवश्यक है–

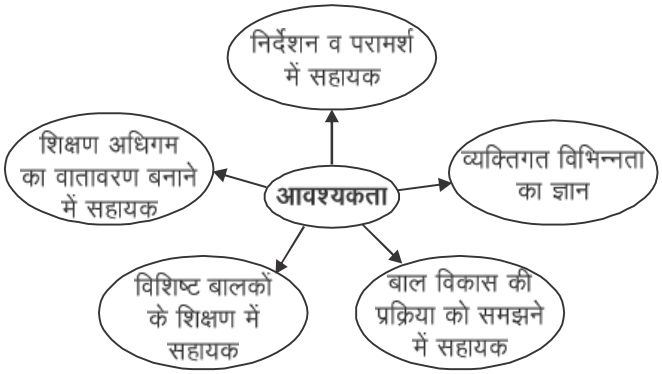

4. बाल विकास का महत्व
(Importance of Child Development)

बाल विकास का महत्व निम्नलिखित रूप से हैं–

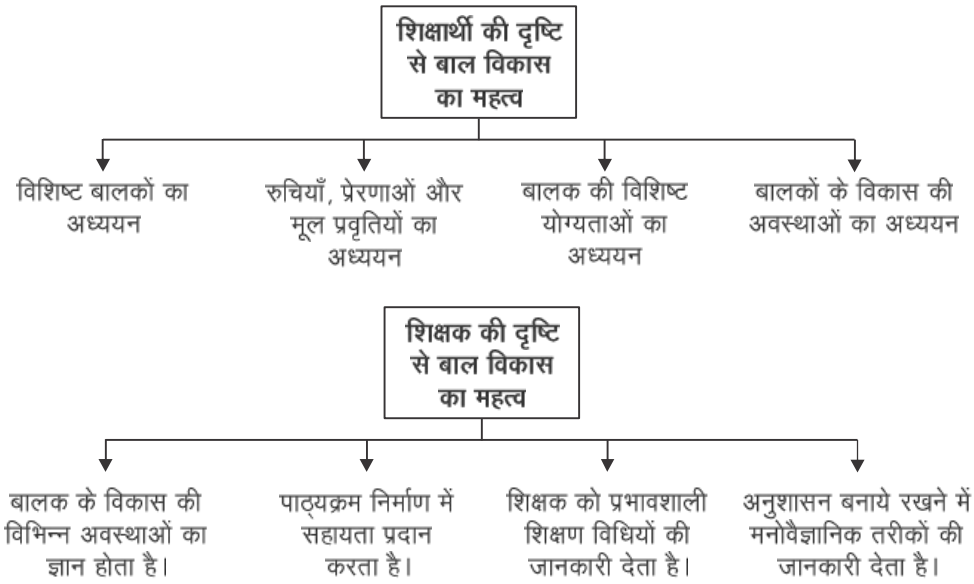

5. बाल विकास के क्षेत्र
(Scopes of Child Development)

बाल विकास का क्षेत्र अत्यन्त ही विस्तृत और व्यापक है। यह बालक के विकास के सभी आयामों, स्वरूपों, असामान्यताओं, शारीरिक व मानसिक परिवर्तनों तथा उनको प्रभावित करने वाले तत्वों; जैसे परिपक्वता और शिक्षण, वंशानुक्रम और वातावरण आदि सभी का अध्ययन करता है। वर्तमान समय में यह इतना अधिक महत्वपूर्ण विषय हो गया है कि दिनोंदिन इसका विस्तार बढ़ता जा रहा है। बाल विकास के विषय क्षेत्र के अन्तर्गत निम्नलिखित बातों को सम्मिलित किया जाता है–

I. बाल विकास की विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन (Study of Various Stages of Development)–प्राणी के जीवन प्रसार में अनेकों अवस्थायें होती हैं। जैसे–गर्भकालीन अवस्था, शैशवावस्था, बचपनावस्था, बाल्यावस्था, वयःसंधि और किशोरावस्था। बाल विकास केवल बाल्यावस्था का ही अध्ययन नहीं करता अपितु विकास क्रम की सभी अवस्थाओं के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक, बौद्धिक आदि सभी पहलुओं का अध्ययन करता है।

II. बाल विकास के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन (Study of Various Aspects of Child Development)–बाल विकास, विकास के किसी एक ही क्षेत्र से सम्बन्धित नहीं होता है। इसके अन्तर्गत विकास के विभिन्न पहलुओं, जैसे–शारीरिक विकास, मानसिक विकास, संवेगात्मक विकास, सामाजिक विकास, क्रियात्मक विकास, भाषा विकास, नैतिक विकास, चारित्रिक विकास और व्यक्तित्व विकास सभी का विस्तारपूर्वक अध्ययन किया जाता है।

III. बालकों की विभिन्न असामान्यताओं का अध्ययन (Study of Various Abnormalities of Children)–बाल विकास के अन्तर्गत केवल सामान्य बालकों के विकास का ही अध्ययन नहीं किया जाता बल्कि बालकों के जीवन विकास क्रम में होने वाली असामान्यताओं और विकृतियों का भी अध्ययन किया जाता है। बाल विकास, असन्तुलित व्यवहारों, मानसिक विकारों, बौद्धिक दुर्बलताओं तथा बाल अपराधों के कारणों को जानने का प्रयास करता है और निराकरण हेतु उपाय भी बताता है।

IV. मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का अध्ययन (Study of Mental Hygiene)–बाल विकास केवल मानसिक दुर्बलताओं और रोगों का ही अध्ययन नहीं करता बल्कि विभिन्न मनोवैज्ञानिक तरीकों से उनके उपचार भी प्रस्तुत करता है। मनोचिकित्सा बाल मनोविज्ञान और बाल विकास की ही देन है।

V. बालकों की विभिन्न मानसिक प्रक्रियाओं का अध्ययन (Study of Various Mental Processes of Children)–बाल विकास बालकों के बौद्धिक विकास की विभिन्न मानसिक प्रक्रियाओं; जैसे–अधिगम, कल्पना, चिन्तन, तर्क, स्मृति तथा प्रत्यक्षीकरण आदि का अध्ययन करता है। बाल विकास यह जानने का प्रयास करता है कि विभिन्न आयु स्तरों में इन मानसिक प्रक्रियायें किस रूप में पायी जाती हैं और इनके विकास की गति क्या होती है? इसी के आधार पर मानसिक प्रक्रियाओं का विकास किया जाता है।

VI. बालकों की वैयक्तिक भिन्नताओं का अध्ययन (Study of Individual Differences of Children)–यद्यपि सभी आयु स्तरों पर विकास का एक निश्चित प्रतिरूप होता है लेकिन फिर भी प्रत्येक क्षेत्र में सभी बालकों का विकास समान नहीं होता है। शारीरिक विकास में कुछ बालक अधिक लम्बे, कुछ नाटे तथा कुछ सामान्य लम्बाई के होते हैं। इसी प्रकार मानसिक विकास में भी कुछ प्रतिभाशाली, कुछ सामान्य और कुछ मन्द बुद्धि होते हैं। इसी प्रकार कुछ बालक सामाजिक तथा बहिर्मुखी होते हैं जबकि कुछ अन्तर्मुखी। अतः विकास के सभी क्षेत्रों में व्यक्तिगत भिन्नता पायी जाती है। बाल विकास वैयक्तिक भिन्नताओं का अध्ययन कर उन कारणों को जानने का प्रयास करता है, जिससे सामान्य विकास प्रभावित हुआ है।

6. बाल विकास के सिद्धान्त एवं शैक्षिक महत्व
(Principles and Educational Importance of Child Development)

बाल विकास के सिद्धान्त निम्नलिखित हैं–

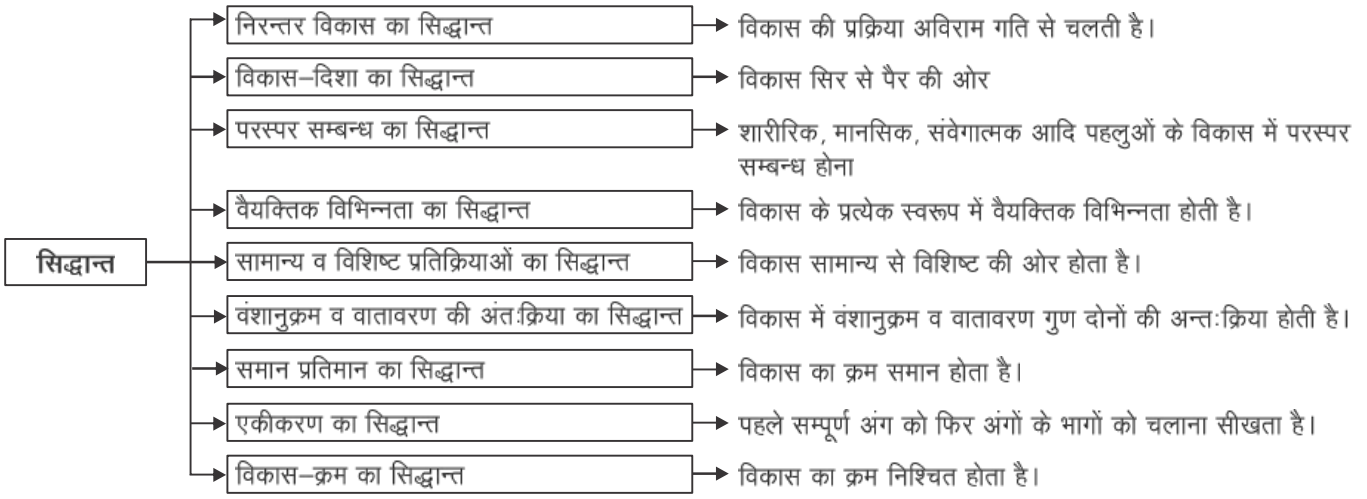

विकास के कुछ अन्य सिद्धान्त हैं–

I. सुनम्यता–विकास में सकारात्मक या नकारात्मक अनुभवों के आधार पर परिर्वतन की क्षमता होती है। वे लोग जिनका अतीत भयानक रहा होता है वे भी उससे उबर कर भविष्य में खुशहाल जीवन जी सकते हैं।

II. बहुआयामी–विकास को केवल एक मापदंड जैसे कि व्यवहार में उतार-चढ़ाव से ही वर्णित नहीं किया जा सकता।

III. बहुदिशात्मकः विकास का कोई एक सामान्य रास्ता नहीं है, जो सबको लेना पड़ेगा। विकास के स्वास्थ्य परिणामों को विभिन्न प्रकार से प्राप्त किया जा सकता है।

IV. विकास का क्रम कुछ हद तक उम्मीद के मुताबिक होता है और उसकी भविष्यवाणी पहले की जा सकती है।

V. विकास में मात्रात्मक तथा गुणात्मक दोनों प्रकार के परिवर्तन शामिल होते हैं।

VI. अधिगम तथा विकास अनुभवों तथा परिपक्वता की अंतःक्रिया का परिणाम है।

VII. पूर्व अनुभवों का अधिगम तथा विकास पर गम्भीर प्रभाव पड़ता है।

VIII. सुरक्षित संबंधों में बच्चों का विकास सर्वाधिक उचित तरीके से होता हैं।

IX. अधिगम तथा विकास विभिन्न सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्यों में होता है तथा उनसे प्रभावित भी होता है।

X. यदि बच्चा विकलांग हो तो अधिगम तथा विकास प्रभावित होते हैं।

XI. बच्चों के अनुभवों से उनके अभिप्रेरणा तथा अधिगम के उपागम को आकार मिलता है।

हालाँकि विकास के कुछ विशिष्ट पथ हैं जो सभी मानवों के लिए समान रहते हैं मगर फिर भी कोई भी दो इंसान पूर्णतः एक जैसे नहीं होते। एक ही घर में पालन-पोषण होने के बाद भी बच्चों की रुचियों, मूल्यों, क्षमताओं तथा व्यवहार में भिन्नताएँ पाई जाती हैं।

- **बाल विकास के सिद्धान्तों का शैक्षिक महत्व**

विकास के सिद्धान्तों का ज्ञान शिक्षक के लिए विशेष रूप से आवश्यक माना गया हैं क्योंकि बालक की शिक्षा की व्यवस्था शिक्षक द्वारा की जाती है। शिक्षक के लिए इन सिद्धान्तों का जानना आवश्यक है, क्योंकि विकास के सिद्धान्तों से परिचित होने पर शिक्षक यह बात जानता है कि वह छात्रों को विकास के लिए प्रेरणा कब प्रदान की जाये। अतः इसके लिए वातावरण तैयार किया जाना चाहिए।

बाल विकास के सिद्धान्त का शैक्षिक महत्व निम्नलिखित है–

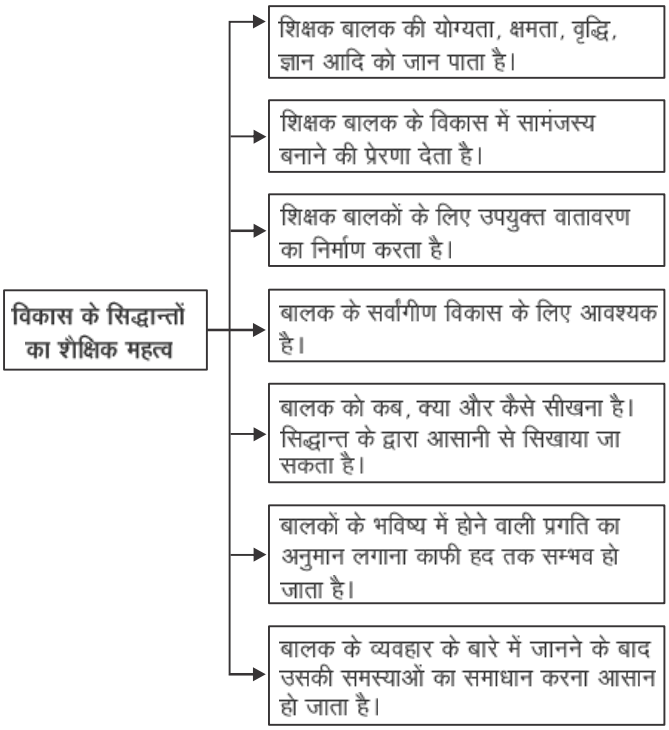

7. विकास एवं वृद्धि की अवधारणा
(Concept of Development and Growth)

विकास एवं वृद्धि की अवधारणा को स्पष्ट रूप से समझाने का प्रयास किया गया है।

I. विकास की अवधारणा (Concept of Development)

विकास एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है जो जन्म से लेकर जीवनपर्यन्त तक अविराम गति से चलती रहती है। विकास केवल शारीरिक वृद्धि की ओर ही संकेत नहीं करता, वरन् इसके अन्तर्गत के सभी शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और संवेगात्मक परिवर्तन सम्मिलित रहते हैं जो गर्भकाल से लेकर मृत्युपर्यन्त तक निरन्तर प्राणी में प्रकट होते रहते हैं। अतः प्राणी के भीतर विभिन्न प्रकार के शारीरिक व मानसिक क्रमिक परिवर्तनों की उत्पत्ति ही 'विकास' है।

हरलॉक (Hurlock) ने विकास को परिभाषित करते हुये कहा है कि "विकास केवल अभिवृद्धि तक ही सीमित नहीं है वरन् वह 'व्यवस्थित' तथा 'समनुगत' परिवर्तन है जिसमें कि प्रौढ़ावस्था के लक्ष्य की ओर परिवर्तनों का प्रगतिशील क्रम निहित रहता है, जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति में नवीन विशेषतायें व योग्यतायें प्रकट होती हैं।"

II. वृद्धि की अवधारणा (Concept of Growth)

वृद्धि को आमतौर पर मानव के शरीर के विभिन्न अंगों के विकास तथा उन अंगों के कार्य करने की क्षमता का विकास माना जाता है। जैसे—शरीर, आकार और भार की वृद्धि। **हरबर्ट सोरेन्सन** के अनुसार, "शारीरिक वृद्धि को बड़ा और भारी होना" बताया है जो वृद्धि और परिवर्तन की ओर संकेत करते हैं। वृद्धि को नापा और तौला जा सकता है।

फ्रैंक के अनुसार, "शरीर के किसी विशेष पक्ष में जो परिवर्तन आता है उसे वृद्धि कहते हैं।"

8. विकास एवं वृद्धि की प्रकृति (Nature of Development and Growth)

विकास एवं वृद्धि की प्रकृति को स्पष्ट किया गया है—

I. विकास की प्रकृति (Nature of Development and Growth)

विकास की प्रकृति निम्नलिखित रूप से है—

(i) विकास की निश्चित पद्धति होती है।
(ii) विकास सामान्य से विशिष्ट दिशा की ओर होता है।
(iii) विकास रुकता नहीं, निरन्तर चलता रहता है।
(iv) विकास का अर्थ अधिक व्यापक है।
(v) विकास और वृद्धि की प्रक्रियाएँ साथ-साथ चलती हैं।
(vi) विकास गुणात्मक एवं मात्रात्मक (Quality) परिवर्तनों का संकेतक है।

II. वृद्धि की प्रकृति (Nature of Growth)

वृद्धि की प्रकृति निम्नलिखित रूप से है—

(i) वृद्धि को मात्रा के रूप में माना जा सकता है।
(ii) वृद्धि निरन्तर नहीं होती।

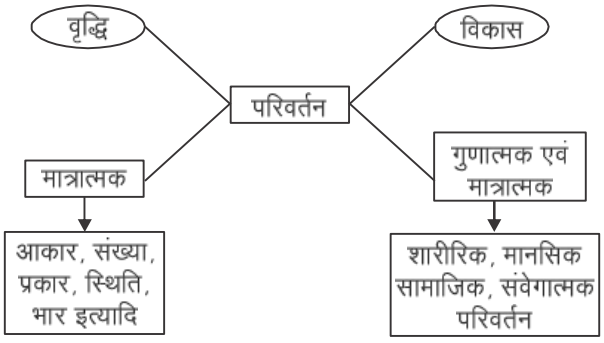

(iii) वृद्धि आन्तरिक रूप से होती है।
(iv) स्त्रियों में पुरुषों की अपेक्षा वृद्धि तीव्र होती है।
(v) शारीरिक और मानसिक वृद्धि का आपस में गहरा सम्बन्ध है।

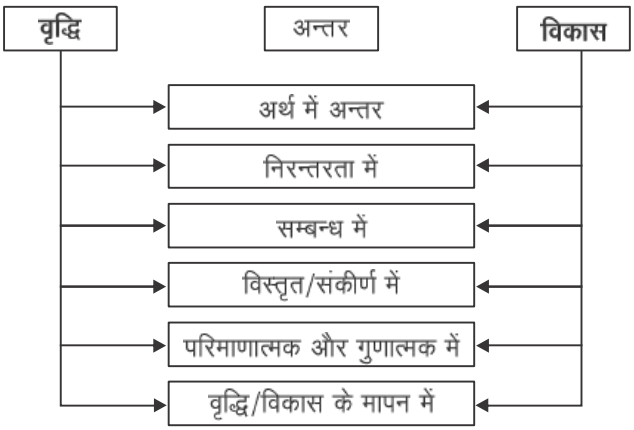

III. वृद्धि और विकास को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affecting Growth and Development)

वृद्धि और विकास को प्रभावित करने वाले कारक निम्नलिखित हैं—

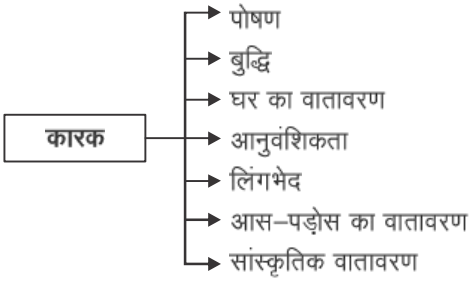

9. बाल विकास की अवस्थाएँ (Stages of Child Development)

बाल विकास की प्रक्रिया को विभिन्न अवस्थाओं में बाँटा जा सकता है। विभिन्न विद्वानों ने विकास की अवस्थाओं को अलग-अलग प्रकार से वर्गीकृत किया है।

यह अवस्थाएँ निम्नलिखित हैं—

I. रॉस के अनुसार विकास की अवस्थाएँ—

(i) शैशवावस्था (Infancy)—जन्म से 5 या 6 वर्ष तक।
(ii) बाल्यावस्था (Childhood)—5 या 6 वर्ष से 12 वर्ष तक।
(iii) किशोरावस्था (Adolescence)—12 वर्ष से 18 वर्ष तक।
(iv) प्रौढ़ावस्था (Adulthood)—18 वर्ष के पश्चात्।

II. हरलॉक (1990) द्वारा वर्णित विकास अवस्थाएँ इस प्रकार हैं—

(i) गर्भकालीन अवस्था (Prenatal Period)—गर्भधारण से जन्म तक।
(ii) शैशवावस्था (Infancy)—जन्म से चौदह दिनों की अवस्था तक।
(iii) बचपनावस्था (Babyhood)—दो सप्ताह के बाद से दो वर्ष तक।
(iv) पूर्व बाल्यावस्था (Early Childhood)—तीन वर्ष से छः वर्ष तक।
(v) उत्तर बाल्यावस्था (Late Childhood)—छः से चौदह वर्ष तक।
(vi) वयः सन्धि या पूर्व किशोरावस्था (Puberty)—ग्यारह से 17 वर्ष तक।

(vii) **किशोरावस्था (Adolescence)**—सत्रह से इक्कीस वर्ष तक।

(viii) **प्रौढ़ावस्था (Adulthood)**—इक्कीस से चालीस वर्ष तक।

III. **कोल (Cole)** ने विकास की अवस्थाओं का वर्गीकरण निम्नलिखित प्रकार से किया है—

(i) **शैशवावस्था (Infancy)**—जन्म से लेकर दो वर्ष तक।

(ii) **प्रारम्भिक बाल्यावस्था (Early Childhood)**—2 से 5 तक।

(iii) **मध्य बाल्यावस्था (Middle Childhood)**—बालक 6 से 12 तथा बालिका 6 से 10।

(iv) **पूर्व किशोरावस्था या उत्तर बाल्यावस्था (Pre Adole-scence or Late Childhood)**—बालक 13 से 14 तक तथा बालिका 11 से 12 तक ।

(v) **प्रारम्भिक किशोरावस्था (Early Adolescence)**— बालक 15 से 16 तक तथा बालिका 12 से 14 तक।

(vi) **मध्य किशोरावस्था (Middle Adolescence)**— बालक 17 से 18 तक तथा बालिका 15 से 17 तक।

(vii) **उत्तर किशोरावस्था (Late Adolescence)**—बालक 19 से 20 तक तथा बालिका 18 से 20 तक।

(viii) **प्रारम्भिक प्रौढ़ावस्था (Early Adulthood)**—21 से 37 तक।

(ix) **मध्य प्रौढ़ावस्था (Middle Adulthood)**—35 से 49 तक।

(x) **उत्तर प्रौढ़ावस्था (Late Adulthood)**—50 से 64 तक।

(xi) **प्रारम्भिक वृद्धावस्था (Early Senescence)**—65 से 74 तक।

(xii) **वृद्धावस्था (Senescence)**—75 से आगे।

IV. **कुछ प्रमुख विकास की अवस्थाओं का वर्णन इस प्रकार है—**

(i) **गर्भकालीन अवस्था (Prenatal Period)**—यह गर्भधारण से जन्म तक की अवस्था है। इस अवस्था की विकास प्रक्रियाओं के अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इस अवस्था की तीन उप-अवस्थाएँ हैं—

(a) **बीजावस्था (Germinal Period)**—यह गर्भधारण से दो सप्ताह तक की अवस्था है।

(b) **भ्रूणावस्था (Embryonic Period)**—यह दो से 18 सप्ताह तक की प्रक्रिया है। इस अवस्था का जीव भ्रूण कहलाता है। इस अवस्था में मुख्य-मुख्य अंगों का निर्माण होता है।

(c) **गर्भावस्था शिशु की अवस्था (Period of the Fetus)**— यह आठ सप्ताह से जन्म से पूर्व तक की अवस्था होती है।

(ii) **शैशवावस्था (Infancy)**—यह जन्म से चौदह दिनों की अवस्था है। इस अवस्था में शिशु को नवजात शिशु (New Born Neonate) कहते हैं।

- इस अवस्था में बालक को अनेक प्रकार की क्रियाएँ जैसे— चूसना, निगलना, श्वसन, उत्सर्जन इत्यादि करनी पड़ती हैं।

(iii) **बचपनावस्था (Babyhood)**—यह अवस्था दो सप्ताह से दो वर्ष तक की अवस्था है। इस अवस्था में बालक पूर्णतः असहाय होता है और अपनी आवश्यकताओं के लिए दूसरों पर निर्भर होता है, परन्तु इस अवस्था में विकास की गति तीव्र होती है।

(iv) **बाल्यावस्था (Childhood)**—यह अवस्था तीन वर्ष के प्रारम्भ से तेरह चौदह वर्ष तक की अवस्था है। इस अवस्था को अध्ययन की सुविधा हेतु दो भागों में बाँटा गया है—(i) पूर्वबाल्यावस्था, (ii) उत्तरबाल्यावस्था।

- बालक में नवीन प्रवृत्तियाँ, जिज्ञासा, सृजनशीलता, अनुकरण इत्यादि का उदय होने लगता है।
- बालक प्रथम बार अकेले सामाजिक वातावरण में प्रवेश करता है और वह विद्यालय जाना प्रारम्भ कर देता है। इस अवस्था में बालक की खिलौनों में रुचि बढ़ जाती है। इस कारण इस उम्र को खिलौनों की उम्र भी कहा जाता है।
- इस अवस्था में बालक मित्रमण्डली में रहना (Group or team) पसन्द करता है।

(v) **वयः सन्धि या पूर्व किशोरावस्था (Puberty)**—इसका कुछ भाग उत्तर बाल्यावस्था और कुछ भाग किशोरावस्था में पड़ता है। लगभग दो वर्ष उत्तर बाल्यावस्था और दो वर्ष किशोरावस्था में पड़ते हैं। इसलिए इस अवस्था को (Overlapping Period) कहा गया है। इस अवस्था में मुख्यतः यौन अंगों का विकास होता है। शारीरिक और मानसिक विकास की गति इस अवस्था में बाल्यावस्था से तीव्र रहती है।

(vi) **किशोरावस्था (Adolescence)**—बाल जीवन की यह अन्तिम अवस्था है। यह 14–15 वर्ष से लगभग 21 वर्ष तक की अवस्था है। लगभग 17 वर्ष तक की अवस्था पूर्व किशोरावस्था कहलाती है तथा इसके बाद की अवस्था उत्तर किशोरावस्था कहलाती है। कुछ लोग इस अवस्था को स्वर्ण आयु (Golden Age) भी कहते हैं।

- इस अवस्था में विपरीत सेक्स के लोगों के प्रति आकर्षण बढ़ जाता है तथा सामाजिकता और कामुकता इस अवस्था की दो मुख्य विशेषताएँ हैं, जिनसे सम्बन्धित अनेक परिवर्तन बालक-बालिकाओं में इस अवस्था में होते हैं।

(vii) **प्रौढ़ावस्था (Adulthood)**—यह इक्कीस से चालीस वर्ष तक की अवस्था है। इसमें कर्त्तव्यों और उत्तरदायित्वों का निर्वाह कर सकता है। जन जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में उसका स्वस्थ समायोजन हो। स्वस्थ समायोजन की ही अवस्था में वह उपलब्धियों को प्राप्त कर सकता है।

(viii) **मध्यावस्था, उत्तर मध्यावस्था (Middle, Late Adult-hood)**—यह अवस्था 41 से 64 वर्ष तक की अवस्था है। इस अवस्था में व्यक्ति के अन्दर शारीरिक व मानसिक परिवर्तन होते हैं। इस समय व्यक्ति सुखमय एवं सम्मानजनक जीवन की कामना करता है।

(ix) **वृद्धावस्था (Senescence)**—यह अवस्था 65 वर्ष के आगे की अवस्था कहलाती है। यह जीवन की अंतिम अवस्था के रूप में जानी जाती है। इस अवस्था में याददाश्त कमजोर पड़ जाती है। इस अवस्था में शारीरिक व मानसिक क्षमताओं में कमी आने लगती है।

V. बाल विकास की प्रमुख तीन अवस्थाओं का वर्णन–

(i) शैशवावस्था (Infancy)–शैशवावस्था विकास क्रम की महत्वपूर्ण अवस्था है। यह अवस्था शिशु जन्म के बाद प्रारम्भ होती है। इस अवस्था के समय के निर्धारण के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वान इसे जन्म से दो सप्ताह तक मानते हैं जबकि कुछ इसे जन्म से 3 और 5 वर्ष तक मानते हैं।

हरलॉक के अनुसार–"शैशवावस्था जन्म से दो सप्ताह तक चलती है और उसके बाद बचपनावस्था प्रारम्भ हो जाती है जो दो वर्ष तक चलती है।"

कुप्पूस्वामी के अनुसार–"शैशवावस्था जन्म से तीन वर्ष तक होती है।"

शैशवावस्था की विशेषतायें (Characteristics of Infancy)–शैशवावस्था की अपनी कुछ प्रमुख विशेषतायें होती हैं जो अन्य अवस्थाओं से भिन्न होती हैं। ये प्रमुख विशेषतायें निम्नलिखित हैं–

(A) अपरिपक्वता (Immaturity)–शैशवावस्था में शिशु न तो शारीरिक रूप से परिपक्व होता है न ही मानसिक रूप से। अतः वह इस योग्य नहीं होता है कि वह अपना कुछ कार्य स्वयं कर सके। शारीरिक और मानसिक रूप से शक्तिहीन होने के कारण उसमें इतनी क्षमता नहीं होती है कि वह जन्म के बाद शीघ्रता से अपने नये वातावरण के साथ समायोजन कर ले। अतः उसे अपने समायोजन के लिये परिवार के संरक्षण की आवश्यकता होती है।

(B) पराश्रितता (Dependency)–अपरिपक्वता के कारण शिशु अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ रहता है। अतः जन्म के बाद वह अपने पालन-पोषण तथा देखभाल के लिये दूसरों पर आश्रित रहता है। गर्भ में तो उसका पोषण प्राकृतिक रूप से माँ के शरीर से होता रहता है किन्तु जन्म के बाद भी उसे जीवित रहने के लिये माँ के दूध की आवश्यकता होती है। अतः शैशवावस्था पराश्रितता की अवस्था होती है।

(C) मूल प्रवृत्यात्मक व्यवहार (Instinctive Behaviour)–शैशवावस्था में शिशु के सभी व्यवहार मूल प्रवृत्तियों द्वारा निर्धारित रहते हैं इसलिये भूख लगने पर रोता है, प्यार करने पर हँसता है। यदि कोई प्रिय वस्तु छीन लेता है तो रोने लगता है। माँ को देखकर प्रसन्न होता है। अतः इस आयु में शिशु में तर्क और चिंतन की कमी के कारण उसकी क्रियायें और व्यवहार मूल प्रवृत्तियों द्वारा प्रेरित होते हैं।

(D) संवेगशीलता (Emotionality)–शिशु बड़ा संवेगी होता है। किन्तु उसके संवेग क्षणिक होते हैं जो मूलतः सुखदायक व दुखदायक संवेदनाओं से सम्बन्धित होते हैं। यदि उसके संवेगों की तुष्टि नहीं होती है तो वह रोने लगता है और तुष्टि होने पर प्रसन्नता का अनुभव करता है।

(E) व्यक्तिगत विभिन्नता (Individual Differences)–जन्म के बाद सभी शिशु समान नहीं होते हैं। उनमें व्यक्तिगत विभिन्नता पायी जाती है। प्रत्येक शिशु की शारीरिक बनावट, रंग, रूप और व्यवहार एक-दूसरे से भिन्न होते हैं। कुछ शिशु शान्त होते हैं जबकि कुछ अधिक रोते हैं। इसी प्रकार से कुछ अधिक क्रियाशील होते हैं जबकि कुछ कम क्रियाशील होते हैं।

(ii) बाल्यावस्था (Childhood)–बाल्यावस्था, वास्तव में मानव जीवन का वह स्वर्णिम समय है जिसमें उसका सर्वांगीण विकास होता है। फ्रायड यद्यपि यह मानते हैं कि बालक का विकास पाँच वर्ष की आयु तक हो जाता है, लेकिन बाल्यावस्था में विकास की यह सम्पूर्णता गति प्राप्त करती है और एक परिपक्व व्यक्ति के निर्माण की ओर अग्रसर होती है।

शैशवावस्था के बाद बाल्यावस्था का आरम्भ होता है। यह अवस्था, बालक के व्यक्तित्व के निर्माण की होती है। बालक में इस अवस्था में विभिन्न आदतों, व्यवहार, रुचि एवं इच्छाओं के प्रतिरूपों का निर्माण होता है।

ब्लेयर, जोन्स एवं सिम्पसन के अनुसार–"शैक्षिक दृष्टिकोण से जीवन चक्र में बाल्यावस्था से अधिक कोई महत्त्वपूर्ण अवस्था नहीं है। जो शिक्षक इस अवस्था के बालकों को शिक्षा देते हैं, उन्हें बालकों का, उनकी आधारभूत आवश्यकताओं का, उनकी समस्याओं एवं उनकी परिस्थितियों की पूर्ण जानकारी होनी चाहिए जो उनके व्यवहार को रूपान्तरित और परिवर्तित करती है।"

"No period during the life cycle is more important than childhood from an educational point of view. Teachers who work at this level should understand children, their fundamental needs, their problems and the forces which modify and produce behaviour change."

—Blair, Jones and Simpson

बाल्यावस्था की विशेषतायें (Characteristics of Childhood)–यद्यपि बाल्यावस्था को 6-12 वर्षायु तक माना जाता है। हरलॉक ने इसे 6 वर्ष से लेकर 12 वर्ष तक के बीच का समय माना है। इस अवस्था में ये विशेषतायें विकसित होती हैं।

(A) शारीरिक व मानसिक स्थिरता (Physical and Mental Stability)–6 या 7 वर्ष की आयु के बाद बालक के शारीरिक और मानसिक विकास में स्थिरता आ जाती है। वह स्थिरता उसकी शारीरिक व मानसिक शक्तियों को दृढ़ता प्रदान करती है। फलस्वरूप, उसका मस्तिष्क परिपक्व-सा और वह स्वयं वयस्क-सा जान पड़ता है।

(B) मानसिक योग्यताओं में वृद्धि (Increase in Mental Abilities) – बाल्यावस्था में बालक की मानसिक योग्यताओं में निरन्तर वृद्धि होती है। उसकी संवेदना और प्रत्यक्षीकरण की शक्तियों में वृद्धि होती है। वह विभिन्न बातों के बारे में तर्क और विचार करने लगता है। वह साधारण बातों पर अधिक देर तक अपने ध्यान को केन्द्रित कर सकता है। उसमें अपने पूर्व-अनुभवों को स्मरण रखने की योग्यता उत्पन्न हो जाती है।

(C) जिज्ञासा की प्रबलता (Forceful Curiosity)–बालक की जिज्ञासा विशेष रूप से प्रबल होती है। वह जिन वस्तुओं के सम्पर्क में आता है, उनके बारे में प्रश्न पूछ कर हर तरह की जानकारी प्राप्त करना चाहता है। उसके ये प्रश्न शैशवावस्था

के साधारण प्रश्नों से भिन्न होते हैं। अब वह शिशु के समान यह नहीं पूछता है—**'वह क्या है ?'** इसके विपरीत, वह पूछता है—**'यह ऐसे क्यों है ?' 'यह ऐसे कैसे हुआ है ?'**

(D) वास्तविक जगत के सम्बन्ध (Relationship with Real World)—इस अवस्था में बालक, शैशवावस्था के काल्पनिक जगत का परित्याग करके वास्तविक जगत में प्रवेश करता है। वह उसकी प्रत्येक वस्तु से आकर्षित होकर उसका ज्ञान प्राप्त करना चाहता है।

(E) सामाजिक गुणों का विकास (Development of Social Qualities)—बालक, विद्यालय के छात्रों और अपने समूह के सदस्यों के साथ पर्याप्त समय व्यतीत करता है। अतः उसमें अनेक सामाजिक गुणों का विकास होता है, जैसे—सहयोग, सद्भावना, सहनशीलता, आज्ञाकारिता आदि।

(iii) किशोरावस्था (Adulthood)—मानव जीवन के विकास की प्रक्रिया में किशोरावस्था का महत्त्वपूर्ण स्थान है। बाल्यावस्था समाप्त होती है और शुरू होती है किशोरावस्था। यह अवस्था युवावस्था अथवा परिपक्वावस्था तक रहती है। यह सतत् प्रक्रिया है। इसे बाल्यावस्था तथा प्रौढ़ावस्था के मध्य का सन्धि काल (Transitional period) कहते हैं। इस अवस्था की विडम्बना होती है—बालक स्वयं को बड़ा समझता है और बड़े उसे छोटा समझते हैं। जबकि **क्रो** एवं **क्रो** ने कहा है—"किशोर ही वर्तमान की शक्ति और भावी आशा को प्रस्तुत करता है।"

"Youth represents the energy of the present and the hope of the future." **—Crow and Crow**

किशोरावस्था के महत्त्व के विषय में **हैडो कमेटी रिपोर्ट** में कहा गया है—"ग्यारह या बारह वर्ष की आयु में बालक की नसों में ज्वार उठना आरम्भ हो जाता है, इसे किशोरावस्था के नाम से पुकारा जाता है, यदि इस ज्वार का समय रहते उपयोग कर लिया जाये और इसकी शक्ति तथा धारा के साथ-साथ नई यात्रा आरम्भ कर दी जाये तो सफलता प्राप्त की जा सकती है।"

"There is a tide which begins to rise in the veins of youth at the age of eleven or twelve. It is called by the name of adolescence. If that tide can be taken at the flood and new voyage begun in the strength and along the show of its current, we think that it will move on to fortune." **—Hadow Committee Report**

किशोरावस्था की विशेषतायें (Characteristics of Adulthood)—किशोरावस्था को दबाव, तनाव एवं तूफान की अवस्था माना गया है। इस अवस्था की विशेषताओं को एक शब्द **'परिवर्तन'** (Change) में व्यक्त किया जा सकता है।

जिन परिवर्तनों की ओर ऊपर संकेत किया गया है, उनसे सम्बन्धित विशेषताएँ निम्नांकित हैं—

(A) शारीरिक विकास (Physical Development)—किशोरावस्था को शारीरिक विकास का सर्वश्रेष्ठ काल माना जाता है। इस काल में किशोर के शरीर में अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन होते हैं, जैसे—भार और लम्बाई में तीव्र वृद्धि, माँसपेशियों और शारीरिक ढाँचे में दृढ़ता, किशोर में दाढ़ी और मूँछ की रोमावलियों एवं किशोरियों में प्रथम मासिक स्राव के दर्शन।

(B) मानसिक विकास (Mental Development)—किशोर के मस्तिष्क का लगभग सभी दिशाओं में विकास होता है। उसमें विशेष रूप से अग्रलिखित मानसिक गुण पाये जाते हैं—कल्पना और दिवास्वप्नों की बहुलता, बुद्धि का अधिकतम विकास, सोचने-समझने और तर्क करने की शक्ति में वृद्धि, विरोधी मानसिक दशायें (Contrasting Mental Moods)।

(C) घनिष्ठ व व्यक्तिगत मित्रता (Fast Friendship)—किसी समूह का सदस्य होते हुए भी किशोर केवल एक या दो बालकों से घनिष्ठ सम्बन्ध रखता है, जो उसके परम मित्र होते हैं और जिनसे वह अपनी समस्याओं के बारे में स्पष्ट रूप से बातचीत करता है।

(D) व्यवहार में विभिन्नता (Difference in Behaviour)—किशोर में आवेगों और संवेगों की बहुत प्रबलता होती है। यही कारण है कि वह विभिन्न अवसरों पर विभिन्न प्रकार का व्यवहार करता है, उदाहरणार्थ, किसी समय वह अत्यधिक क्रियाशील होता है और किसी समय अत्यधिक काहिल, किसी परिस्थिति में साधारण रूप से उत्साहपूर्ण और किसी में असाधारण रूप से उत्साहहीन।

(E) स्वतन्त्रता व विद्रोह की भावना (Freedom and Revolt Feelings)—किशोर में शारीरिक और मानसिक स्वतन्त्रता की प्रबल भावना होती है। वह बड़ों के आदेशों, विभिन्न परम्पराओं, रीति-रिवाजों और अन्धविश्वासों के बन्धनों में न बँधकर स्वतन्त्र जीवन व्यतीत करना चाहता है। अतः यदि उस पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध लगाया जाता है, तो उसमें विद्रोह की ज्वाला फूट पड़ती है।

10. बाल विकास के विभिन्न पक्ष (Different Aspects of Child Development)

बाल विकास के विभिन्न पक्ष निम्नलिखित हैं—

I. शारीरिक विकास (Physical Development)

प्राणी के जीवन में शारीरिक विकास का बड़ा महत्व है। शारीरिक विकास का प्रारम्भ गर्भाधान के समय से ही हो जाता है और भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में पृथक्-पृथक् गति से चलता रहता है। बच्चे का शारीरिक विकास उसके सभी प्रकार के विकासों; जैसे—मानसिक विकास, संवेगात्मक विकास तथा सामाजिक विकास सभी को प्रभावित करता है। विद्वानों का मानना है कि जिस बच्चे का शारीरिक विकास अच्छा होता है उसका मानसिक विकास भी तीव्र गति से होता है। इसी प्रकार शारीरिक विकास पर ही सामाजिक और संवेगात्मक विकास निर्भर रहता है। जो बच्चे अस्वस्थ व कमजोर होते हैं वे स्वभाव से चिड़चिड़े हो जाते हैं जिससे उनके समूह के साथी भी कम होते हैं। अतः उनका सामाजिक विकास भी ठीक प्रकार से नहीं हो पाता है।

शारीरिक विकास के अन्तर्गत शरीर के समस्त आंतरिक और बाह्य अंगों का विकास आता है; जैसे—शरीर की लम्बाई, भार, शारीरिक अनुपात, अस्थियों का विकास, माँसपेशियों का विकास, आंतरिक

अवयवों का विकास तथा शारीरिक स्वास्थ्य का अध्ययन आता है। शारीरिक विकास के अन्तर्गत यह भी देखा जाता है कि वे कौन-कौन से तत्व हैं जो शारीरिक विकास को प्रभावित करते हैं।

(i) शैशवावस्था में शारीरिक विकास (Physical Development in Infancy)

शैशवावस्था में होने वाले प्रमुख शारीरिक परिवर्तन निम्नलिखित हैं–

(A) भार (Weight)—जन्म के समय और पूरी शैशवावस्था में बालक का भार बालिका से अधिक होता है। जन्म के समय बालक का भार लगभग 3.3 किग्रा और बालिका का भार लगभग 3.2 किग्रा होता है। पहले 6 माह में शिशु का भार दोगुना और एक वर्ष के अन्त में तिगुना हो जाता है।

(B) लम्बाई (Length)—शैशवावस्था में 3 वर्ष तक बच्चों के विकास की गति अत्यन्त तीव्र होती है। जन्म के समय बालक एवं बालिका की लम्बाई 50.5, 49.9 सेमी होती है।

लड़कियों के लिए चार्ट

आयु	वजन (किग्रा)	लंबाई (सेमी)
जन्म	3.2	49.9
3 महीने	5.4	60.2
6 महीने	7.2	66.6
9 महीने	8.6	71.1
1 वर्ष	9.5	75.0
2 वर्ष	11.8	84.5
3 वर्ष	14.1	93.9
4 वर्ष	16.0	101.6
5 वर्ष	17.7	108.4
6 वर्ष	19.5	114.6

लड़कों के लिए चार्ट

आयु	वजन (किग्रा)	लंबाई (सेमी)
जन्म	3.3	50.5
3 महीने	6.0	61.1
6 महीने	7.8	67.8
9 महीने	9.2	72.3
1 वर्ष	10.2	76.1
2 वर्ष	12.3	85.6
3 वर्ष	14.6	94.9
4 वर्ष	16.7	102.9
5 वर्ष	18.7	109.9
6 वर्ष	20.7	116.1

(C) सिर व मस्तिष्क (Head and Brain)—नवजात शिशु की सिर की लम्बाई उसके शरीर के कुल लम्बाई की 1/4 होती है। पहले 2 वर्षों में सिर बहुत तीव्र गति से बढ़ता है तथा उसका भार शरीर के भार के अनुपात से अधिक होता है।

(D) हड्डियाँ (Bones)—नवजात शिशु की हड्डियाँ छोटी और संख्या में 270 होती हैं। सम्पूर्ण शैशवावस्था में ये छोटी, कोमल, लचीली होती हैं। हड्डियाँ कैल्शियम, फॉस्फोरस और अन्य खनिज लवणों की सहायता से मजबूत होती हैं। इस आयु में शिशुओं के भोजन में इन लवणों की अधिकता होनी चाहिये।

(E) मांसपेशियाँ (Muscles)—शिशु की मांसपेशी का भार उसके शरीर के कुल भाग का 23% होता है। यह भार धीरे-धीरे बढ़ता चला जाता है। उसकी भुजाओं का विकास तीव्र गति से होता है। प्रथम दो वर्षों में भुजाएँ दुगुनी और टांगें डेढ़ गुनी हो जाती हैं। छः वर्ष की आयु तक मांसपेशियों में लचीलापन होता है।

(F) दाँत (Teeth)—प्रसवपूर्व जीवन के तीसरे या चौथे महीने में शिशु के जबड़े में दाँत विकसित होने लगते हैं, किन्तु वे तब तक नजर नहीं आते हैं जब तक कि शिशु 5 से 6 माह का नहीं हो जाता। तत्पश्चात 2 से ढाई वर्ष की आयु तक दाँत प्रति माह एक दाँत की दर से निकलना आरम्भ हो जाते हैं। आरम्भिक दाँत निकलने का क्रम निम्नानुसार है–

(i) मध्य कृंतक (6-12 माह)
(ii) पश्च कृंतक (9-16 माह)
(iii) रदनक (16-23 माह)
(iv) प्रथम चर्वणक (13-19 माह)
(v) द्वितीय चर्वणक (22-33 माह)

Note :
- प्रत्येक मनुष्य के सामान्यतः दो जोड़ी दाँत होते हैं अर्थात् अस्थाई दाँत या दूध के दाँत और स्थायी दाँत।
- बीस अस्थाई या दूध के दाँत होते हैं और बत्तीस स्थायी दाँत होते हैं।
- 3 वर्ष की आयु तक बच्चे के सभी दूध के दाँत या अस्थाई दाँत आ जाते हैं।
- 5-6 वर्ष की आयु तक अस्थाई दाँतों के स्थान पर स्थाई दाँत आने लगते हैं।

(ii) बाल्यावस्था में शारीरिक विकास (Physical Development in Childhood)

बाल्यावस्था जीवन का अनोखा काल होता है। ये अवस्था 6 से 12 वर्ष तक मानी जाती है। बाल्यावस्था के प्रथम तीन वर्षों में (6 से 9 वर्ष) शारीरिक विकास तीव्र गति से होता है और बाद के तीन वर्षों में इस विकास में स्थिरता आ जाती है। बाल्यावस्था में होने वाले प्रमुख शारीरिक परिवर्तन निम्नलिखित हैं–

(A) भार (Weight)—इस अवस्था में बालक के भार में पर्याप्त वृद्धि होती है। 9 या 10 वर्ष की आयु तक बालकों का भार बालिकाओं से अधिक होता है। इसके बाद बालिकाओं का भार अधिक होना प्रारम्भ हो जाता है।

(B) लम्बाई (Length)—बाल्यावस्था में शरीर की लम्बाई कम बढ़ती है। इन सब वर्षों में लम्बाई 2 या 3 इंच ही बढ़ती है।

(C) हड्डियाँ (Bones)—इस अवस्था में प्रथम 4-5 वर्षों में हड्डियों की संख्या में वृद्धि होती है। 10-12 वर्ष की आयु में हड्डियों का दृढ़ीकरण होता है।

(D) दाँत (Teeth)—बाल्यावस्था के आरम्भ में दूध के दाँत गिरने लगते हैं और उनके स्थान पर स्थायी दाँत निकलने लगते हैं। 12-13 वर्ष की अवस्था तक सभी स्थायी दाँत निकल आते हैं।

(E) मांसपेशियाँ (Muscles)—मांसपेशियों का भार 8 वर्ष तक कुल भार का 27% हो जाता है। बालिकाओं की मांसपेशियाँ बालकों की अपेक्षा अधिक विकसित होती हैं।

(F) शरीर निर्माण (Physic Development)—आरम्भिक बाल्यावस्था में शरीर की संरचना में पहली बार अन्तर नजर आने लगते हैं। जैसे–जैसे बच्चे के शारीरिक अनुपातों में परिवर्तन होता है, बच्चे के शरीर में इंडोमॉर्फिक, एक्टोमॉर्फिक तथा मेसोमॉर्फिक शरीर निर्माण की विशेषताएँ सामने आने लगती हैं।

> **Note :** शारीरिक संरचना तीन प्रकार की होती है–इंडोमॉर्फिक (गोलाकार) शरीर वाला बच्चा थुलथुला तथा मोटा होता है। अन्य बच्चों की संरचना मेसोमॉर्फिक (आयताकार) या ठोस पेशीय होती है जिनका शरीर भारी, कठोर तथा आयताकार होता है और कुछ लोगों का शरीर एक्टोमॉर्फिक (लम्बाकार) संरचना का होता है जो लम्बे तथा पतले होते हैं।

(iii) किशोरावस्था में शारीरिक विकास (Physical Development in Adolescence)

13 से 21 वर्ष की अवस्था, किशोरावस्था कहलाती है जो उत्तर बाल्यावस्था की समाप्ति से प्रारम्भ होती है। शारीरिक विकास की दृष्टि से यह अवस्था अत्यधिक महत्त्वपूर्ण होती है क्योंकि किशोरावस्था की समाप्ति तक बालक और बालिका पूर्ण शारीरिक परिपक्वता प्राप्त कर लेते हैं। किशोरावस्था में होने वाले प्रमुख शारीरिक परिवर्तन निम्नलिखित हैं–

(A) किशोरावस्था में लम्बाई में वृद्धि (Increase in Height During Adolescence)—किशोरावस्था में यह देखा गया है कि बाल्यावस्था के पश्चात् बालिकायें अपनी आयु के बालकों से लम्बाई में अधिक होने लगती हैं। लेकिन पूर्व किशोरावस्था के समाप्त होते-होते लड़के अपनी आयु की लड़कियों से अधिक लम्बे हो जाते हैं। अध्ययनों द्वारा भी यह देखा गया है कि बालक 14 वर्ष की आयु तक अपनी लम्बाई का केवल 57 प्रतिशत ही वृद्धि कर पाते हैं जबकि बालिकायें इस समय तक अपनी लम्बाई का लगभग 90 प्रतिशत प्राप्त कर लेती हैं। लगभग 18 वर्ष के पश्चात लड़कियों की लम्बाई की वृद्धि रुक जाती है।

लम्बाई की वृद्धि पर पिट्यूटरी ग्रन्थि के स्राव का प्रभाव पड़ता है जिन बालकों के स्राव कम होता है उनकी लम्बाई की वृद्धि कम होती है।

(B) किशोरावस्था में भार में वृद्धि (Increase in Weight During Adolescence)—शारीरिक भार में वृद्धि सबसे अधिक किशोरावस्था में ही होती है किन्तु बालक व बालिकाओं के भार में वृद्धि में थोड़ा अन्तर रहता है। 11 से 14 वर्ष की बीच बालिकाओं का वजन समान आयु के लड़कों से अधिक हो जाता है। परन्तु 15 के बाद बालक-बालिकाओं की अपेक्षा भार में अधिक हो जाते हैं।

किशोरावस्था में भार अस्थियों और माँसपेशियों के विकास के कारण बढ़ता है।

(C) शारीरिक अंगों का अनुपात (Proportion of Different Body Organs)— किशोरावस्था में पूर्ण शारीरिक विकास होने के कारण लगभग शरीर के सभी अंग अनुपात में आ जाते हैं। सिर, मुँह, भुजायें, पैर तथा धड़ सभी शारीरिक अवयव समुचित अनुपात ग्रहण कर लेते हैं फलस्वरूप किशोर प्रौढ़ आकृति ग्रहण कर लेता है।

(D) त्वचा तथा बाल (Skin and Hair)—इस अवस्था में चेहरे की बनावट में आश्चर्यजनक परिवर्तन आते हैं। बालिकाओं की त्वचा में निखार आ जाता है और बालकों के चेहरे पर दाढ़ी, मूँछ आ जाने के कारण उनके चेहरे की कोमलता समाप्त हो जाती है। बालकों की आवाज में कोमलता समाप्त हो जाती है जबकि बालिकाओं की आवाज कोमल हो जाती है।

(E) दाँतों का विकास (Development of Teeth)—किशोरावस्था में दाँतों का विकास समान रूप से नहीं होता है इसमें व्यक्तिगत भिन्नता पायी जाती है। सामान्यतः 13 वर्ष की आयु तक बालकों के लगभग 27–28 दाँत निकल आते हैं, शेष चार दाँतों का विकास किशोरावस्था में होता है।

(F) माँसपेशियों का विकास (Development of Muscles)—इस अवस्था में माँसपेशियों का विकास तीव्र गति से होता है। लगभग 15 वर्ष की आयु तक माँसपेशियों का वजन शरीर के वजन का 33 प्रतिशत हो जाता है। फिर प्रति वर्ष लगभग 11 प्रतिशत की वृद्धि होती है। माँसपेशियों का विकास शरीर को सुडौलता प्रदान करता है और भार में वृद्धि करता है।

(G) विभिन्न शारीरिक अंगों का विकास (Development of Different Body Organs)—शरीर के विभिन्न अंगों का विकास इस अवस्था में पूर्ण हो जाता है साथ ही वे अनुपात में आ जाते हैं। हृदय बीस वर्ष की आयु तक पूर्ण विकसित हो जाता है। हड्डियाँ, माँसपेशियाँ, ज्ञानेन्द्रियाँ, फेफड़े जन्म की अपेक्षा बीस गुना अधिक बढ़ जाते हैं। अस्थियाँ जन्म के समय 270 होती हैं जो 14 वर्ष की आयु में बढ़कर 350 हो जाती हैं और फिर प्रौढ़ावस्था में घटकर पुनः 206 रह जाती हैं क्योंकि छोटी और कोमल अस्थियाँ आपस में मिलकर दृढ़ हो जाती हैं जिससे उनकी संख्या कम हो जाती है।

अस्थियों के विकास पर पौष्टिक भोजन और व्यायाम का प्रभाव पड़ता है।

(H) शारीरिक परिवर्तन (Physical Changes)—किशोरावस्था में यौन सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण शारीरिक परिवर्तन होते हैं। अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इन्हें दो भागों में बाँटा जा सकता है—

(a) यौन सम्बन्धी मुख्य परिवर्तन (Primary Sex Changes)

(b) यौन सम्बन्धी गौण परिवर्तन (Secondary Sex Changes)

II. मानसिक विकास (Mental Development)

मानसिक विकास एक सतत् प्रक्रिया है। जैसे-जैसे आयु वृद्धि के साथ-साथ मस्तिष्क विकसित होता जाता है वैसे ही वैसे उसका मानसिक विकास होता जाता है। मानसिक विकास के कारण ही प्राणी अपने चारों ओर के वातावरण का ज्ञान प्राप्त कर धीरे-धीरे उसके साथ समायोजन करता है। जैसे शैशवावस्था में शिशु केवल अपनी भूख की आवश्यकता को महसूस करता है और भूख होने पर रोने लगता है, लेकिन आयु वृद्धि के साथ-साथ वह विभिन्न संकेतों से अपने आसपास रहने वाले व्यक्तियों को यह आभास कराता है कि वह भूखा है। एक वर्ष का बालक अपनी दूध की बोतल उठाकर माँ के पास ले जाता है तथा भाषा विकास होने पर वह बोलकर खाने-पीने की वस्तुओं को माँगता है इस प्रकार धीरे-धीरे ज्ञान में वृद्धि होने पर तथा बुद्धि का विकास होने से वह अपने ज्ञान और अनुभव द्वारा अपने वातावरण के साथ समायोजन करने में सफल होता है। अतः मानसिक विकास से तात्पर्य प्राणी में मानसिक शक्ति का उदय होना है। मानसिक शक्तियों के विकास से व्यक्ति में मानसिक सजगता आती है, फलस्वरूप प्राणी परिस्थितियों के अनुकूल व्यवहार करता है, अतः मानसिक सजगता ही "मानसिक विकास" है। मानसिक विकास एक जटिल प्रक्रिया है इसके अन्तर्गत समझने की क्षमता, चिन्तन, स्मरण, ध्यान केन्द्रण, निरीक्षण, विचार, तर्क तथा समस्या समाधान करने की शक्ति सम्मिलित रहती है। इन सभी क्रियाओं से प्राणी में चेतना व समझ आती है, फलस्वरूप वह अपने व्यवहारों को परिवर्तित व परिमार्जित करता जाता है।

मानसिक विकास का केन्द्र बिन्दु बुद्धि (Intelligence) है। इसी से मानसिक सजगता आती है एक सामान्य बुद्धि बालक मंद बुद्धि बालक की तुलना में अपने वातावरण के साथ आसानी से समायोजन स्थापित कर लेता है।

(i) शैशवावस्था में मानसिक विकास (Mental Development in Infancy)

जन्म से दो सप्ताह तक—जन्म के समय शिशु निरीह अवस्था में होता है, वह केवल अपनी शारीरिक दशाओं के अनुसार प्रतिवर्त क्रियायें; जैसे—रोना, सांस लेना, अधिक सर्दी लगने पर कांपना, आदि प्रदर्शित करता है। कभी-कभी तीव्र ध्वनियों को सुनकर चौंक जाता है। जन्म के दूसरे सप्ताह में वह तीव्र रोशनी की ओर भी ध्यान देने लगता है।

बचपनावस्था में बौद्धिक विकास (तीसरे सप्ताह से दूसरे वर्ष के अंत तक)—इस अवधि में शिशु माँ को पहचानने लगता है। इसलिये रोता हुआ बालक माँ की गोद में जाने पर चुप हो जाता है, भूख लगने और पीड़ा होने पर वह गरदन इधर-उधर घुमाकर यह देखने का प्रयास करता है कि माँ उसके पास है या नहीं।

प्रथम माह—प्रथम माह में वह अपने दुख, सुख का अनुभव करने लगता है। इसके अतिरिक्त वह अपने आसपास व्यक्तियों की उपस्थिति तथा अनुपस्थिति को स्पष्ट रूप से महसूस करने लगता है—इसलिये अकेला छोड़े जाने पर रोने लगता है और माँ तथा अन्य व्यक्तियों के सामने आने पर उनकी गोद में जाने के लिये हाथ उठा देता है या उन्हें पकड़ने की चेष्टा करता है।

द्वितीय माह—दो माह का बालक वस्तुओं की ओर अधिक ध्यान देने लगता है इसलिये सिर को इधर-उधर घुमाने लगता है। जैसे व्यक्ति और वस्तुयें उसके सामने आती हैं उन्हें ध्यान से देखने लगता है। माँ को देखकर प्रसन्न होता है और अस्पष्ट ध्वनि मुँह से निकालने लगता है।

तीसरा माह—तीन माह का शिशु वस्तुओं पर और अधिक ध्यान केन्द्रित करने लगता है। वस्तुओं को हाथों से कसकर पकड़ लेता है।

हरलॉक के अनुसार—"तीन माह की आयु में बालक उत्तेजनाओं के प्रति प्रतिक्रियायें प्रदर्शित करता है, विचित्र स्थितियों के प्रति सचेत होता है, उठाने पर सफलतापूर्वक समायोजन करता है।"

इस प्रकार तीन माह के शिशु में ध्यान और विवेक की योग्यता का विकास होने लगता है।

चतुर्थ माह—इस अवधि में शिशु क्रोध और स्नेह में अन्तर समझने लगता है। इस समय उसमें जिज्ञासा का भाव भी देखा जाता है। क्योंकि जब उसके पास से वस्तुओं को हटा लिया जाता है तो वह उन्हें खींचने का प्रयास करता है। इस अवधि में भाषा विकास भी हो जाता है, वह विभिन्न प्रकार के व्यंजनों का उच्चारण मुँह से करता है।

पाँचवाँ माह—माँ को अच्छी तरह पहचानने लगता है इसलिये उसी के सम्पर्क में रहना चाहता है। माँ के साथ प्रसन्नता का अनुभव करता है और माँ से अलग होने पर कंपन करता है। अपने आसपास रहने वाले व्यक्तियों को पहचानता है। आवाजों की ओर ध्यान देता है। विभिन्न वस्तुओं को पकड़ने के लिये हाथों को आगे बढ़ाता है।

छठवाँ माह—इस अवस्था में बालक में अनुकरण की क्षमता का विकास हो जाता है। वह बड़ों के हावभावों का अनुकरण करने लगता है। दुख की अवस्था में क्रोध का प्रदर्शन करता है। सही समय पर दूध न मिलने पर क्रोधित होता है और दूध मिलने पर मुस्कराता है।

सातवाँ माह—सात माह का शिशु विभिन्न वस्तुओं को स्पष्ट रूप से पहचानने लगता है; जैसे यदि उसे दूध के समय पानी देने पर वह स्पष्ट रूप से नकारात्मक उत्तर देता है। इस अवस्था में उसी अभिरुचि का भी विकास हो जाता है। जो वस्तुयें व क्रियायें उसे पसंद नहीं होती हैं उनकी उपस्थिति में रोता है इस समय उसकी इन्द्रियों का पर्याप्त विकास हो जाता है अतः ठंडा, गर्म, खट्टा, मीठा, प्रकाश, अंधकार आदि वस्तुओं का ज्ञान होने लगता है।

आठवाँ माह–अनुकरण शक्ति का विकास और अधिक हो जाता है। वह अपनी विभिन्न वस्तुओं को पहचानता है इसलिये उसका खिलौना दूसरे बालक द्वारा ले लिये जाने पर क्रोधित हो जाता है। संकेतों को समझने लगता है और उसके अनुरूप प्रतिक्रिया प्रदर्शित करता है। अन्य समान आयु के बालकों के साथ खेलने का प्रयास भी करता है।

नवाँ माह–शिशु की अवबोधन शक्ति बढ़ जाती है। समान आयु के बच्चों को पहचानकर उनके साथ खेलता है। सामूहिक क्रियाओं में उसे आनंद आता है।

दसवाँ माह–इस अवस्था में वह सहयोग और विरोध दोनों का प्रकाशन करता है। इस समय ईर्ष्या प्रवृत्ति भी बालकों में देखी जाती है। अनुकरण क्षमता और अधिक बढ़ जाती है। अपनी भाषा द्वारा दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयास करता है।

ग्यारहवाँ व बारहवाँ माह–भाषा विकास अधिक हो जाता है। इस समय वह अस्पष्ट एक अक्षरीय भाषा का प्रयोग करता है। भिन्नता की भावना का विकास होता है जिससे अन्य लोगों के साथ रहना भी सीखता है। निरीक्षण क्षमता का विकास होता है फलस्वरूप वह विभिन्न वस्तुओं को उठाकर और छूकर देखता है।

प्रथम व द्वितीय वर्ष–इस अवस्था में बालक के बोलने की शक्ति का विकास हो जाता है। वह अपनी भाषा द्वारा दूसरों तक अपने विचारों को पहुँचाने का प्रयास करता है। एक शब्दीय वाक्यों को बोलता है। समूह में रहना पसन्द करता है। समूह के विचारों को ग्रहण करता है और सामाजिक क्रियाओं का अनुकरण करने लगता है। दो वर्ष का बालक छोटे-छोटे वाक्यों को बोलने लगता है। भाषा के माध्यम से उसका सामाजिक सम्पर्क बढ़ता है। शब्द भण्डार में वृद्धि होती है। कल्पना, चिन्तन और स्मरण शक्ति का भी विकास होता है। बालक छोटे-छोटे शब्दों, अंकों आदि को सीख जाता है।

(ii) बाल्यावस्था में मानसिक विकास (Mental Development in Childhood)

तीसरा वर्ष–इस अवस्था में जिज्ञासा शक्ति बढ़ती है अतः बालक विभिन्न वस्तुओं के सम्बन्ध में प्रश्न करने लगता है। मानसिक शक्ति का विकास होता है जिससे वह अपना नाम, कुछ फल, अपने शरीर के अंग आदि को संकेतों से बता देता है। दैनिक प्रयोग की विभिन्न वस्तुयें माँगने पर उठाकर ले आता है।

चौथा वर्ष–स्कूल जाने की अवस्था होने के कारण इस समय बालक को सौ तक के अंकों का ज्ञान हो जाता है अतः पैसों के बारे में जानता है। इसके अतिरिक्त तर्क का प्रयोग कर लेता है। छोटी बड़ी रेखाओं और आकारों में अंतर कर लेता है। लिखना भी आरंभ कर देता है तथा स्कूल जाने के कारण उसकी दिनचर्या तथा क्रियाओं में संतुलन आ जाता है।

पाँचवाँ वर्ष–इस अवस्था में उसे विभिन्न वस्तुओं के तुलनात्मक अध्ययन की जानकारी होती जाती है वह अपना नाम, पता, परिवार के लोगों का नाम तथा पास-पड़ोस के बारे में जानकारी रखता है। भाषा विकास अधिक हो जाता है, वाक्य बनाने की क्षमता आ जाती है, सरल तथा कुछ सीमा तक जटिल वाक्य बनाने लगता है। गणितीय ज्ञान में भी वृद्धि होती है। विभिन्न प्रत्ययों जैसे–रंग, समय, दिन, भार, संख्या आदि का ज्ञान हो जाता है। दैनिक जीवन के उपयोग में आने वाली विभिन्न वस्तुओं के सही उपयोग को समझने लगता है।

छठवाँ वर्ष–इस आयु में बालक का भाषा विकास और अधिक हो जाता है। विभिन्न वस्तुओं का प्रत्ययात्मक ज्ञान बढ़ता है। गणितीय योग्यता में भी वृद्धि होती है। 100 तक की गिनती आसानी से गिन लेता है। चित्रों से विभिन्न वस्तुओं का पहचान लेता है। अनुकरण की क्षमता बढ़ जाती है जिससे आसपास की वस्तुओं और व्यक्तियों के अनुकरण को सीखने की क्षमता का विकास होता है। ध्यान की क्षमता में भी विकास होता है। विभिन्न प्रश्नों के उत्तर अपनी तर्क क्षमता के आधार पर देने लगता है।

सातवाँ वर्ष–स्कूल जाने के कारण इस अवस्था में बालक के भाषा विकास में प्रगति होती है। वह सरल से जटिल वाक्यों की रचना करने लगता है। विभिन्न प्रत्ययों; जैसे–स्वाद, रंग, रूप, गंध आदि का अर्थ स्पष्ट हो जाता है। विभिन्न वस्तुओं में परस्पर समानता और अंतर समझने लगता है। जिज्ञासा प्रवृत्ति बढ़ जाने के कारण छोटे-छोटे प्रश्न पूछता है। छोटी-छोटी समस्याओं का हल अपनी तर्क-शक्ति के आधार पर करता है। इस प्रकार इस अवस्था तक बालक में जिज्ञासा, स्मृति, तर्क, चिन्तन, समस्या समाधान तथा भाषा का विकास बहुत अधिक मात्रा में हो जाता है।

आठवाँ वर्ष–भाषा और अधिक विकसित हो जाती है। भाषा की अभिव्यक्ति में प्रवाह आ जाता है। वाक्य रचना शुद्ध हो जाती है। बालक 15-16 शब्दीय वाक्य आसानी से बोल लेता है। विभिन्न समस्याओं के समाधान के सम्बन्ध में उचित निर्णय लेने का प्रयास करता है। समूह में रहने की प्रवृत्ति का विकास होता है। वह घर की अपेक्षा बाहर रहना अधिक पसन्द करता है। स्मरण शक्ति का विकास अधिक हो जाता है जिससे वह छोटी-छोटी कविताओं और कक्षा में बतायी गयी विभिन्न बातों को आसानी से याद कर लेता है।

नवाँ वर्ष–इस अवस्था में बालक की भाषा, स्मृति, कल्पना, चिन्तन और ध्यान आदि क्षमताओं का और अधिक विकास हो जाता है। इस अवस्था में वह समय, दूरी, ऊँचाई, लम्बाई, दिन, समय, तारीख, महीना और वर्ष आदि को आसानी से बता देता है, विभिन्न प्रकार के सिक्कों और नोटों का सही मूल्य बता सकता है। पढ़ाई की तरफ ध्यान केन्द्रित हो जाता है, विद्यालयीय क्रियाओं में रुचि लेता है। सामाजिक सहभागिता बढ़ जाती है।

दसवाँ वर्ष–इस अवस्था में उसकी वाक्शक्ति बढ़ जाती है। इसके अतिरिक्त निरीक्षण, ध्यान, तर्क, स्मरण और रुचियों का भी उत्तरोतर विकास होता है। वह 20-25 शब्दों के वाक्यों को आसानी से बोल लेता है। वह छोटी-छोटी कहानियाँ, चुटकले, कक्षा की घटनायें, कवितायें आदि आसानी से याद कर लेता है

और आसानी से दोहराता भी है। बालक के जीवन में नियमितता आ जाती है। आज्ञापालन की आदत का विकास होता है। गणितीय योग्यता का विकास भी होता है।

ग्यारहवाँ वर्ष—इस अवस्था में बालक विभिन्न वस्तुओं की समानता और भिन्नता के बारे में अधिकाधिक जानकारी रखता है। गणितीय ज्ञान भी बहुत अधिक विकसित हो जाता है। अपने आसपास की विभिन्न वस्तुओं की जानकारी रखता है तथा उनसे सम्बन्धित समस्याओं के उचित समाधान भी प्रस्तुत करता है तथा अपने ज्ञानात्मक विकास के लिये निरंतन प्रत्यत्नशील रहता है। विभिन्न प्रकार की रुचियों का विकास होता है; जैसे—खेल, अभिनय, संगीत, नृत्य आदि।

बारहवाँ वर्ष—इस अवस्था में बालक की चिन्तन और तर्क शक्ति बढ़ती है। अनुभवों के आधार पर वह विभिन्न समस्याओं का समाधान स्वयं करने लगता है। तर्क-शक्ति के आधार पर विभिन्न समस्याओं के परिणाम के बारे में पूर्व ही अनुमान लगा लेता है। जिज्ञासा बढ़ जाती है अतः विभिन्न परिस्थितियों का निरीक्षण कर स्वयं ही जानने का प्रयास करता है। शब्द भण्डार बढ़ जाता है। वाक्-शक्ति अधिक हो जाती है। वाक्य रचना में शुद्धता आ जाती है। विभिन्न प्रश्नों के तर्कपूर्ण उत्तर देने में सफल रहता है। ध्यान और एकाग्रता बढ़ती है अब यह अधिक समय तक किसी कार्य को लगातार कर सकता है। विभिन्न प्रकार की रुचियों का विकास होता है। खेलों और मनोरंजन के प्रति रुचि बढ़ती है। यदि इस अवस्था में सीखने का अवसर मिले तो बालक एक से अधिक भाषाओं का ज्ञान रख सकता है।

(iii) किशोरावस्था में मानसिक विकास (Mental Development in Adolescence)

शारीरिक विकास के समान, मानसिक विकास भी किशोरावस्था में बहुत तीव्रगति से होता है। **वुडवर्थ** (Woodworth) के अनुसार, "मानसिक विकास पन्द्रह से बीस वर्ष की आयु में अपनी उच्चतम सीमा पर पहुँच जाता है।"

इस अवस्था में मानसिक विकास की प्रमुख अवस्थायें निम्नलिखित हैं—

(A) रुचियों का विकास—इस समय किशोर बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न बनना चाहते हैं। इस समय विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित रुचियों का विकास होता है। प्रशिक्षण, उपयुक्त वातावरण तथा माता-पिता और शिक्षकों का सहयोग मिलने पर उनमें सृजनात्मकता का विकास होता है। किशोरों की रुचियाँ अध्ययन, खेल-कूद, ललितकला किसी भी क्षेत्र में हो सकती हैं। रुचियाँ सीखने में सहायक होती हैं। बालिकायें नृत्य, संगीत, ड्रामा, चित्रकारी आदि में रुचि रखती हैं जबकि बालक मानसिक खेलों तथा प्रतिस्पर्धात्मक कार्यों में रुचि रखते हैं।

(B) सीखने की क्षमता का विकास—बहुमुखी रुचियों के विकास के कारण किशोर बालक विभिन्न क्षेत्रों में व्यावहारिक, सैद्धान्तिक वैज्ञानिक तथा यांत्रिक क्रियाओं को सीखने का प्रयास करते हैं।

(C) मानसिक योग्यताओं का विकास—इस अवस्था में मानसिक विकास में परिपक्वता आने से किशोरों में; जैसे—सोचने-विचारने, अंतर करने, निर्णय लेने तथा समस्याओं का समाधान करने की मानसिक योग्यतायें विकसित हो जाती हैं।

(D) बुद्धि का अधिकतम विकास—किशोरावस्था में बुद्धि का विकास भी अपनी उच्चतम सीमा पर पहुँच जाता है जिससे बालकों में निम्नलिखित बौद्धिक क्षमतायें दृष्टिगत होती हैं—

(a) तर्क शक्ति
(b) स्मरण शक्ति
(c) कल्पना शक्ति
(d) भाषा का विकास
(e) चिन्तन शक्ति
(f) ध्यान केन्द्रित करने की क्षमता का विकास

III. संवेगात्मक विकास (Emotional Development)

संवेगात्मक विकास मानव जीवन के विकास व उन्नति के लिये आवश्यक है। यह विकास मानव जीवन को बहुत प्रभावित करता है व उसी से उसके व्यक्तित्व निर्माण में सहायता मिलती है। जब व्यक्ति अपने संवेगों; जैसे—भय, क्रोध, प्रेम आदि का सही प्रकाशन करना सीख लेता है तो उसे संवेगात्मक विकास कहते हैं।

प्राणी के विकास क्रम में संवेगात्मक विकास का बड़ा महत्व है। संवेग प्राणी के व्यक्तित्व का निर्धारण करते हैं। यदि किसी व्यक्ति का संवेगात्मक विकास सुचारु रूप से नहीं होता है तो उसका व्यक्तित्व निर्माण भी सही प्रकार से नहीं होता है क्योंकि संवेगों द्वारा ही व्यक्ति में 'सृजन' और 'विनाश' की भावनायें विकसित होती हैं। 'सृजन' की भावना सन्तुलित व्यक्तित्व निर्माण का द्योतक है और 'विनाश' की भावना व्यक्तित्व के विघटन का सूचक है। 'प्रेम' संवेग प्राणी को आनन्द प्रदान करता है और उसे रचनात्मक कार्यों की ओर प्रेरित करता है। इसके विपरीत दुख, घृणा तथा ईर्ष्या सृजन के लिए अभिशाप है। ये प्राणी को विनाश की ओर ले जाते हैं। प्राणी के जीवन में संवेगात्मक विकास समान गति से नहीं होता है। प्रत्येक अवस्था में इसके विकास की गति भिन्न-भिन्न होती है।

(i) शैशवावस्था में संवेगात्मक विकास (Emotional Development in Infancy)

- शिशुओं का संवेगात्मक विकास धीरे-धीरे अस्पष्टता की ओर होता है।
- विशिष्ट संवेग मन्द गति के स्वभाव के साथ जुड़ता है।
- शारीरिक आयु के साथ-साथ संवेगात्मक विकास में तीव्रता होती है।
- शैशवावस्था में मुख्यतया भय, क्रोध व प्रेम आदि तीन ही संवेगों का विकास होता है।
- शिशु थोड़ी-थोड़ी देर में अपने संवेगों को बदलते रहते हैं। वो कभी रोता है, कभी हँसता है और कभी-कभी दोनों का प्रकटीकरण साथ-साथ ही करने लगता है।
- शैशवावस्था के अन्तिम चरण में वातावरण संवेगात्मक विकास को प्रभावित करने लगता है।

(ii) बाल्यावस्था में संवेगात्मक विकास (Emotional Development in Childhood)

- इस अवस्था में संवेगों में स्थायित्व आना प्रारम्भ हो जाता है।
- बालक संवेग व समाज के नियमों में समायोजन करने लगता है।
- वह प्रत्येक क्रिया के प्रति प्रेम, ईर्ष्या, घृणा व प्रतिस्पर्धा की भावना प्रकट करने लगता है।
- माता-पिता द्वारा बताये कार्य के प्रति वह हाँ या न कहकर चुप रहता और बाद में झूठ बोलकर अपने को उपेक्षा से बचाता है।
- इस अवस्था के अन्तिम चरणों में वह संवेगों पर नियन्त्रण करना सीख जाता है।

(iii) किशोरावस्था में संवेगात्मक विकास (Emotional Development in Adolescence)

- किशोरावस्था में प्रवेश करने पर किशोर/किशोरी से अनुशासित जीवन व्यतीत करने की आशा की जाती है, पर परिणाम ठीक इसके विपरीत होता है। हम उन्हें न तो बालकों की कोटि में रखते हैं न बड़ों की कोटि में। इस अवस्था में सबसे अधिक संवेगात्मक अस्थिरता पाई जाती है।
- किशोर/किशोरी में प्रेम, दया, क्रोध, सहानुभूति आदि संवेग स्थायी रूप धारण कर लेते हैं। वह इन पर नियन्त्रण नहीं रख पाता। अतः सामान्यतः अन्यायी व्यक्ति के प्रति क्रोध व दुःखी व्यक्ति के प्रति दया की अभिव्यक्ति करता है।
- किशोर/किशोरी की शारीरिक शक्ति की उनके संवेगों पर छाप होती है। जैसे सबल व स्वस्थ किशोर में संवेगात्मक स्थिरता व निर्बल व अस्वस्थ किशोर में संवेगात्मक अस्थिरता पाई जाती है।
- किशोर/किशोरी अनेकों बातों के बारे में चिन्तित रहते हैं। उदाहरणार्थ- अपनी आकृति, स्वास्थ्य, सम्मान, धन प्राप्ति, शैक्षिक प्रगति, सामाजिक सफलता आदि।
- किशोर न तो बालक समझा जाता है न प्रौढ़। अतः उसे अपने संवेगात्मक जीवन में वातावरण से अनुकूलन में बहुत कठिनाई होती है। यदि वह अपने प्रयास में असफल रहता है, तो उसे घोर निराशा होती है। ऐसी स्थिति में वो कभी-कभी घर से भाग जाता है या आत्महत्या तक का शिकार हो जाता है।
- किशोरावस्था में असाधारण रूप से शारीरिक व मानसिक परिवर्तन होते हैं। किशोर और किशोरी दोनों में काम प्रवृत्ति इतनी तीव्र होती है जो कि उसके संवेगात्मक व्यवहार पर बहुत अधिक प्रभाव डालती है।

IV. सामाजिक विकास (Social Development)

शिशु जन्म के समय सामाजिक प्राणी नहीं होता है। जैसे-जैसे उसका शारीरिक और मानसिक विकास होता है, वैसे ही वैसे उसका सामाजिक विकास भी होता है। अपने परिवार के सदस्यों, अपने समूह के साथियों, अपने समाज की संस्थाओं और परम्पराओं एवं अपनी स्वयं की रुचियों और इच्छाओं से प्रभावित होकर वह अपने सामाजिक व्यवहार का निर्माण और अपना सामाजिक विकास करता है। सामाजिक व्यवहार में स्थिरता न होकर परिवर्तनशीलता होती है। अतः समय और परिस्थितियों के अनुसार उसमें परिवर्तन होता रहता है और सामाजिक विकास एक निश्चित दिशा की ओर बढ़ता जाता है। इस प्रकार, समाजीकरण की प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है। **सॉरे** व **टेलफोर्ड** ने लिखा है—"समाजीकरण की प्रक्रिया दूसरे व्यक्तियों के साथ शिशु के प्रथम सम्पर्क से आरम्भ होती है और आजीवन चलती रहती है।"

सामाजिक विकास की विभिन्न अवस्थाएँ निम्न प्रकार से हैं—

हरलॉक—"सामाजिक विकास का अर्थ सामाजिक सम्बन्धों में परिपक्वता प्राप्त करना है।"

(i) शैशवावस्था में सामाजिक विकास (Social Development in Infancy)—जन्म के समय शिशु सामाजिक प्राणी नहीं होता है। जैसे-जैसे उसका शारीरिक, मानसिक विकास होता है। वैसे-वैसे उसका सामाजिक विकास भी होता है। शिशु के समाजीकरण की प्रक्रिया दूसरे व्यक्तियों के साथ सम्पर्क से प्रारम्भ होती है।

(a) तीन-चार माह के शिशु में सामाजिक विकास होने लगता है। यह तब पता चलता है कि रोता या हँसता हुआ बालक अपरिचित व्यक्ति को देखकर शांत हो जाता है।

(b) 2 वर्ष की आयु में शिशु अपनी आयु के बच्चों के साथ खेलना शुरू कर देता है।

(c) 3 वर्ष की आयु में वह समूह कार्य में रुचि लेने लगता है।

आयु	सामाजिक विकास
1 माह	बालक साधारण आवाजों व मानव की आवाजों में अन्तर नहीं समझ पाता है।
2 माह	इस अवस्था में बालक मनुष्य की आवाज पहचान सकता है। दूसरों को मुसकराते देखकर मुसकराता है और गोद में उठाने पर रोना बंद कर देता है।
3 माह	बच्चा दूसरों के बीच अपनी माँ को पहचान लेता है उससे बात करता है।
4 माह	बालक उठाने के लिए बाँहें फैलाता है उसके साथ कोई खेलता है तो हँसता है।
5 माह	वह क्रोध और प्रेम के अन्तर को समझता है।
6 माह	अपरिचित व परिचित में अन्तर करता है। वह क्रोध व प्रेम के व्यवहार में भिन्न प्रतिक्रिया करता है।
8 माह	आवाज व कार्यों का अनुसरण करने लगता है।
12 माह	बालक बड़ों की आज्ञा प्रारम्भ करता है और शीशे में अपने प्रतिबिम्ब से खेलता है।
2 वर्ष	बालक घर के कार्यों में सहयोग करने लगता है। वह खिलौनों से खेलने में रुचि दिखाता है।
3 वर्ष	इस आयु में बालक दूसरे बच्चों के साथ खेलने लगता है।
5 वर्ष	इस आयु में बालक सामूहिक खेलों की ओर आकर्षित होता है जो वे खेलते हैं।

(ii) बाल्यावस्था में सामाजिक विकास (Social Development in Childhood)—बाल्यावस्था में सामाजिक विकास निम्न प्रकार से होता है—

बाल्यावस्था में बालक का सम्पर्क बाह्य शक्तियों से अधिक होता है इस कारण सामाजिक विकास बड़ी तीव्र गति से होता है। इस अवस्था में वह विद्यालय में अन्य बालकों, अध्यापकों, परिवार के सदस्यों से सम्पर्क करता है।

हरलॉक (Hurlock) ने बाल्यावस्था में बालक के सामाजिक विकास का निम्नांकित वर्णन किया है—

(a) लगभग 6 वर्ष की आयु में बालक प्राथमिक विद्यालय में प्रवेश करता है। वहाँ वह एक नए वातावरण से अनुकूलन करना, सामाजिक कार्यों में भाग लेना और नए मित्र बनाना सीखता है।

(b) अनुकूलन करने के उपरान्त, बालक के व्यवहार में उन्नति और परिवर्तन आरम्भ हो जाता है। फलस्वरूप, उसमें स्वतन्त्रता, सहायता और उत्तरदायित्व के गुणों का विकास होने लगता है।

(c) विद्यालय में बालक किसी-न-किसी टोली का सदस्य हो जाता है। यह टोली उसके वस्त्रों के रूपों, खेल के प्रकारों और उचित-अनुचित के आदर्शों को निर्धारित करती है। इस प्रकार, बालक के सामाजिक विकास को एक नवीन दिशा प्राप्त होती है।

(d) टोली, बालक में अनेक सामाजिक गुणों का विकास करती है। इन गुणों पर प्रकाश डालते हुए **हरलॉक** (Hurlock) ने लिखा है—"टोली बालक के आत्म-नियंत्रण, साहस, न्याय, सहनशीलता, नेता के प्रति भक्ति, दूसरों के प्रति सद्भावना आदि गुणों का विकास करती है।"

(e) **क्रो एवं क्रो** (Crow and Crow) के अनुसार—इस अवस्था में बालक अपने शिक्षक का सम्मान तो करता है, पर उसका परिहास करने की अपनी प्रवृत्ति का दमन नहीं कर पाता है।

(iii) किशोरावस्था में सामाजिक विकास (Social Development in Adolescence)—किशोरावस्था में सामाजिक विकास निम्न प्रकार से होता है—

क्रो एवं क्रो (Crow and Crow) के अनुसार—"जब बालक 13 या 14 वर्ष की आयु में प्रवेश करता है तब उसके प्रति दूसरों के और दूसरों के प्रति उसके कुछ दृष्टिकोण न केवल उसके अनुभवों में, वरन् उसके सामाजिक सम्बन्धों में भी परिवर्तन करने लगते हैं।" इस परिवर्तन के कारण उसके सामाजिक विकास का स्वरूप निम्नांकित होता है—

(a) बालकों और बालिकाओं में एक-दूसरे के प्रति बहुत आकर्षण उत्पन्न हो जाता है। अतः वे अपनी सर्वोत्तम वेश-भूषा, बनाव-शृंगार और सज-धज में अपने को एक-दूसरे के समक्ष उपस्थित करते हैं।

(b) बालक और बालिकाएँ दोनों अपने-अपने समूहों का निर्माण करते हैं। इन समूहों का मुख्य उद्देश्य होता है—मनोरंजन, जैसे—पर्यटन, पिकनिक, नृत्य, संगीत आदि।

(c) कुछ बालक और बालिकाएँ किसी भी समूह के सदस्य नहीं बनते हैं। वे उनसे अलग रहकर अपने या विभिन्न लिंग के व्यक्ति से घनिष्ठता स्थापित कर लेते हैं और उसी के साथ अपना समय व्यतीत करते हैं।

(d) बालकों में अपने समूह के प्रति अत्यधिक भक्ति होती है। वे उसके द्वारा स्वीकृत वेश-भूषा, आचार-विचार, व्यवहार आदि को अपना आदर्श बनाते हैं।

(e) समूह की सदस्यता के कारण उनमें नेतृत्व, उत्साह, सहानुभूति, सद्भावना आदि सामाजिक गुणों का विकास होता है। साथ ही, उनकी आदतों, रुचियों और जीवन-दर्शन का निर्माण होता है।

(f) इस अवस्था में बालकों और बालिकाओं का अपने माता-पिता से किसी-न-किसी बात पर संघर्ष या मतभेद हो जाता है। यदि माता-पिता उनकी स्वतन्त्रता का दमन करके, उनके जीवन को अपने आदेशों के साँचे में ढालने का प्रयत्न करते हैं या उनके समक्ष नैतिक आदर्श प्रस्तुत करके उनके अनुकरण किए जाने पर बल देते हैं, तो नये खून में विद्रोह की भावना चीत्कार कर उठती है।

(g) किशोर बालक अपने भावी व्यवसाय का चुनाव करने के लिए सदैव चिन्तित रहता है। इस कार्य में उसकी सफलता या असफलता उसके सामाजिक विकास, को निश्चित रूप से प्रभावित करती है।

(h) किशोर बालक और बालिकाएँ सदैव किसी-न-किसी चिन्ता या समस्या में उलझे रहते हैं, जैसे—धन, प्रेम, विवाह, कक्षा में प्रगति, पारिवारिक जीवन आदि। ये समस्याएँ उनके सामाजिक विकास की गति को तीव्र या मन्द, उचित या अनुचित दिशा प्रदान करती हैं।

V. भाषा क्षमता का विकास (Language Ability of Development)

भाषा एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा कोई भी व्यक्ति अपने विचारों का आदान-प्रदान कर सकता है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है इस नाते उसे निरन्तर अपने विचारों को दूसरों के सामने अभिव्यक्त करने के लिए भाषा की आवश्यकता होती है अतः भाषा और विचारों का घनिष्ठ सम्बन्ध है। भाषा विचारों की अभिव्यक्ति का एक सुन्दर और सुगम माध्यम है। एक गूंगा व्यक्ति दूसरों के सामने स्वयं को कितना असहाय महसूस करता है जब वह अपने विचारों को भाषा के माध्यम से प्रकट नहीं कर पाता है। यद्यपि वह अपने हाव-भाव तथा अंग संचालन द्वारा अपनी बात को कहने का प्रयास करता है किन्तु उसमें इतनी स्पष्टता नहीं होती है। अतः भाषा के माध्यम से विचारों को प्रकट करने पर उनमें स्पष्टता आ जाती है। अतः प्रत्येक बालक के विकास क्रम में भाषा विकास होना परम आवश्यक है। भाषा विकास बालकों के मानसिक और सामाजिक विकास में सहायता प्रदान करता है। भाषा के माध्यम से विचारों का आदान-प्रदान करने से व्यक्ति की सामाजिकता का विकास होता है। इसी प्रकार पढ़ने, लिखने, सीखने आदि सभी क्रियाओं में भी

भाषा विकास माध्यम का कार्य करता है। भाषा विकास के कारण ही मानव दूसरे जीवों से श्रेष्ठ माना जाता है। मानव की सभ्यता व संस्कृति का विकास भी भाषा की ही देन है।

हरलॉक के अनुसार, "भाषा से तात्पर्य विचारों तथा अनुभूतियों का अर्थ व्यक्त करने वाले उन सभी साधनों से है जिसमें संज्ञान या विचारों के आदान-प्रदान के सभी पक्ष; जैसे—लिखना, बोलना, संकेत, चेहरे की अभिव्यक्ति, हाव-भाव आदि सम्मिलित हैं।"

शैफर एवं किप के अनुसार, "भाषा का आशय ऐसे कुछ अर्थहीन वैयक्तिक प्रतीकों (ध्वनियों, अक्षरों, हाव-भाव) से है, जिन्हें किन्हीं मान्य नियमों के आधार पर संयुक्त करके असंख्य सन्देशों का सम्प्रेषण कर सकते हैं।

इस प्रकार स्पष्ट हो रहा है कि भाषा शब्द का अर्थ बहुत ही व्यापक एवं जटिल भी है। विचारों तथा भावों को व्यक्त करने वाले सभी माध्यम या साधन इसमें सम्मिलित हैं। एक भाषा दूसरी किसी भाषा से अनेक तरह से भिन्न हो सकती है, परन्तु भाषा में कुछ निश्चित मापदण्ड होते हैं और इसी कारण यह उपयोगी तथा उत्पादक मानी जाती है। **प्रथम**—किसी भी भाषा में शब्दों एवं वाक्यों की संख्या असीमित तथा अनन्त होती है। **द्वितीय**—कोई भी विचार या अवधारणा हर भाषा के माध्यम से प्रेषित की जा सकती है। हाँ, यह हो सकता है कि किसी एक भाषा में उसे व्यक्त करने में कम शब्द प्रयुक्त करने पड़े और दूसरी भाषा में अधिक शब्द लग सकते हैं। प्रत्येक भाषा की कुछ विशेषताएँ होती हैं जिनके कारण भाषा में सम्प्रेषण की क्षमता आती है।

संरचना (Structure) तथा नियम (rules) जो भाषा को मूलतः निर्धारित करते हैं के चार प्रमुख तत्व हैं—

(i) ध्वनिग्राम (Phoneme)

(ii) रूपग्राम (Morphon)

(iii) वाक्य-विन्यास (Syntax)

(iv) अर्थविज्ञान (Semantics)

(i) ध्वनिग्राम (Phoneme)—बोली जाने वाली भाषा की सबसे छोटी इकाई को ध्वनिग्राम कहते हैं। जैसे—'t', 'th' एवं 'k' की आवाज ध्वनिग्राम के उदाहरण हैं। **बोर्न** के अनुसार, अंग्रेजी में लगभग 45 ध्वनिग्राम हैं। यह अपने आप में अर्थहीन होते हैं। उनकी भूमिका चिन्तन में नहीं के बराबर होती है।

(ii) रूपग्राम (Morphone)—जब ध्वनिग्राम को आपस में शब्द, उपसर्ग या प्रत्यय बनाने के लिए संयोजित कर लिया जाता है तो इसे रूपग्राम कहा जाता है। जैसे—'Red' 'Hot' आदि रूपग्राम के उदाहरण हैं। जिनमें तीन–तीन ध्वनिग्राम संयोजित हैं। इस तरह रूपग्राम भाषा की सबसे छोटी अर्थपूर्ण इकाई है।

(iii) वाक्य-विन्यास (Syntax)—जिस तरह ध्वनिग्रामों एवं रूपग्रामों को संयोजित करने का नियम होता है उसी तरह से वाक्य या उनके अर्थों को संरचित करने के लिए कुछ नियम होते हैं। इन नियमों को व्याकरण कहा जाता है। वाक्य-विन्यास नियम का ऐसा तंत्र है जो यह निर्धारित करता है कि व्यक्ति किस तरह के शब्दों का उपयोग व्याकरणीय वाक्यों के निर्माण में करता है।

(iv) अर्थ विज्ञान (Semantics)—अर्थ-विज्ञान यह बतलाता है कि व्यक्ति रूपग्रामों एवं वाक्यों से अर्थ किस तरह से निकालता है।

- **शैशवावस्था में भाषा विकास (Language Development in Infancy)**

शिशु का प्रथम क्रन्दन उसकी भाषा विकास की शुरुआत होती है। इस समय उसे स्वर और व्यंजनों का ज्ञान नहीं होता है। लगभग उसे चार माह तक शिशु जो ध्वनियाँ निकालता है उनमें स्वरों की संख्या अधिक होती है। लगभग 10 माह की अवस्था में शिशु एक शब्द का उच्चारण करता है और उसी शब्द की पुनरावृत्ति बार-बार करता है। लगभग 1 वर्ष तक शिशु की भाषा अस्पष्ट होती है केवल उसके माता-पिता ही अनुमान स्वरूप उसके शब्दोच्चारण का अर्थ निकाल सकते हैं। लगभग 1½ वर्ष की आयु में उसकी कुछ-कुछ भाषा समझ में आने लगती है।

शैशवावस्था में बालक की वाक्य रचना केवल एक शब्द की होती है; जैसे दूध के लिए वह बू-बू शब्द का उच्चारण करता है। इसी प्रकार वे अन्य वस्तुओं के लिए भी एक ही शब्द का प्रयोग करते हैं।

स्मिथ (Smith) ने शैशवावस्था के भाषा विकास क्रम को निम्न सारणी के अनुसार प्रस्तुत किया है—

स्मिथ के अनुसार शैशवावस्था में भाषा विकास

आयु	शब्द
जन्म से 8 माह	0
10 माह	1
1 वर्ष	3
1 वर्ष 3 माह	19
1 वर्ष 6 माह	22
1 वर्ष 9 माह	118
2 वर्ष	212

- **बाल्यावस्था में भाषा विकास (Language Development in Childhood)**

जैसे-जैसे बालक की आयु में वृद्धि होती है वैसे-वैसे उसके स्वरयन्त्र तथा स्नायुविक अंगों में परिपक्वता आती जाती है फलस्वरूप धीरे-धीरे उसका भाषा विकास तीव्र गति से होने लगता है। बाल्यावस्था में बालक शब्द से लेकर वाक्य निर्माण की क्रिया में दक्षता प्राप्त कर लेता है।

बाल मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि बाल्यावस्था में भी बालिकाओं का भाषा विकास बालकों की तुलना में तीव्र गति से होता है तथा लड़कों की अपेक्षा उनके वाक्यों में शब्दों की संख्या अधिक होती है। इसके अतिरिक्त भाषा प्रस्तुतीकरण में भी बालिकायें बालकों से तेज होती हैं। प्रथम छः वर्षों तक यह गति तीव्र रहती है फिर मन्द हो जाती है।

बाल्यावस्था में भाषा विकास पर घर, विद्यालय, समूह के साथी, परिवार की सामाजिक व आर्थिक स्थिति तथा उचित निर्देश का प्रभाव पड़ता है।

- **किशोरावस्था में भाषा विकास (Language Development in Adolescence)**

भाषा विकास की दृष्टि से भी किशोरावस्था अति महत्वपूर्ण मानी जाती है। इस समय वह अपने वयस्कों द्वारा निर्धारित मापदण्ड के अनुसार ही भाषा का प्रयोग करता है। उसकी भाषा में सूक्ष्मता और बौद्धिकता की झलक मिलती है। इस समय उसकी भाषा का स्वरूप स्व-निर्धारित होता है। उसके शब्दों में भावों की गहनता तथा शब्दों की जटिलता होती है। उच्चारण में शुद्धता आ जाती है और व्याकरण का प्रयोग सन्तोषजनक होता है।

इसके अतिरिक्त किशोरावस्था में जो संवेगों की बहुलता होती है। इससे भी भाषा विकास प्रभावित होता है। कल्पना शक्ति का बाहुल्य होने के कारण इसी अवस्था में वे कवि, कहानीकार, चित्रकार, नाटककार, अभिनेता, विचारक आदि बनने की सोचते हैं। जिसमें भिन्न-भिन्न रूपों में उनकी भाषा का परिष्कृत रूप प्रकट होता है। विपरीत लिंग के प्रति आकर्षण होने पर उनकी भाषा में सौन्दर्य माधुर्य झलकता है।

इस समय उनका शब्द भण्डार विस्तृत हो जाता है। निश्चित भाषा शैली का विकास होता है। भाषा में प्रौढ़ता होती है।

किशोरों का भाषा विकास उनके सामाजिक समायोजन में सहायता प्रदान करता है। किशोर चिन्तनशील तथा संवेदनशील प्राणी होता है। वह अपने चिन्तन व संवेगों को भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। भाषा के उचित प्रयोग से वह समूह के बीच अपना एक स्थान बना पाता है जिससे सामाजिक समायोजन में सहायता मिलती है।

बालकों का भाषा विकास एकाएक नहीं होता है। यह तो एक लम्बी और जटिल प्रक्रिया है जिसके कई सोपान हैं। वैसे जन्म के बाद प्रथम क्रन्दन को ही भाषा विकास की प्रारम्भिक अवस्था माना जाता है किन्तु इस समय उसे इस बात का ज्ञान नहीं होता है कि उसका क्रन्दन किस कारण से है। बालक का वास्तविक भाषा विकास तभी माना जाता है जब वह स्वयं द्वारा उच्चारित शब्दों का अर्थ समझ सके तथा शब्दों का व्यक्तियों तथा वस्तुओं से सम्बन्ध जोड़ सके। अतः बालकों के भाषा विकास की अवस्थाओं को पाँच भागों में बाँटा जाता है–

(i) बोलने की तैयारी (Preparation for Speech)—भाषा विकास की प्रारम्भिक अवस्था ही "बोलने की तैयारी है" है। यह अवस्था जन्म के बाद से प्रारम्भ होकर 13 से 14 महीने तक रहती है। भाषा विकास की इस प्रक्रिया के दौरान बालक क्रन्दन द्वारा, बलबलाहट द्वारा तथा हावभाव द्वारा अपनी वाणी को प्रकट करने का प्रयास करता है।

(A) क्रन्दन (Crying)—प्रत्येक सामान्य शिशु के जीवन का प्रारम्भ उसके क्रन्दन से होता है। मनोवैज्ञानिकों ने क्रन्दन को ही भाषा विकास का प्रारम्भिक स्वरूप माना है। बालकों की यह क्रिया एक सहज क्रिया है इसका बालक से कोई बौद्धिक या संवेगात्मक सम्बन्ध नहीं होता है। जन्म के बाद प्रथम क्रन्दन तो एक प्राकृतिक क्रिया है। जन्म के बाद प्रथम दो सप्ताह तक भी बालकों का रोना उद्देश्यहीन तथा अनियमित होता है किन्तु आयु वृद्धि के साथ-साथ शिशु का क्रन्दन उसकी आवश्यकताओं से जुड़ता जाता है। तीन-चार सप्ताह के शिशु के क्रन्दन से यह स्पष्ट होने लगता है कि या तो वह भूखा है, उसे कोई पीड़ा है, या उसके वस्त्र व बिस्तर गीला हो गया है।

- **शिशु क्रन्दन के कारण**–जन्म के पश्चात् दो सप्ताह तक तो शिशु क्रन्दन की क्रिया निरर्थक होती है लेकिन दो सप्ताह बाद शिशु का क्रन्दन परिस्थितिजन्य हो जाता है। शिशु क्रन्दन के उसके आन्तरिक व बाह्य कारण हो सकते हैं; जैसे–भूख, थकान, पीड़ा, गीले वस्त्र, तीव्र ध्वनियाँ, तीव्र प्रकाश, भय आदि। जैसे-जैसे बालक की आयु बढ़ती जाती है उनके रोने के कारणों में वृद्धि होती जाती है। तीन-चार माह का बालक अपने आसपास दूसरे व्यक्तियों की उपस्थिति को समझने लगता है। अतः उसका क्रन्दन दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने के लिए भी होने लगता है। चार-पाँच माह का शिशु अपरिचित व्यक्तियों को देखकर रोने लगता है। 6-7 माह के शिशु अपनी प्रिय वस्तु छीन लेने पर रोते हैं यदि उनकी क्रियाओं में बाधा उत्पन्न की जाती है तो भी रोने लगते हैं। 1 वर्ष का बालक भय, अपरिचित व्यक्ति व परिस्थिति, कसे वस्त्र, भूख-प्यास तथा पीड़ा की स्थिति में रोता है। वे बालक अन्य बालकों की तुलना में अधिक रोते हैं जो क्रन्दन को अपनी आवश्यकता पूर्ति का साधन समझते हैं।
- **शिशु क्रन्दन में शारीरिक स्थितियाँ**–सभी बालकों का रोने का स्वरूप समान नहीं होता है कुछ बालक अधिक रोते हैं जबकि कुछ बालक कम। मनोवैज्ञानिकों का ऐसा मानना है कि जो गर्भवती मातायें गर्भावस्था में संवेगात्मक रूप से अस्थिर रहती हैं जन्म के पश्चात् उनके शिशुओं के क्रन्दन की प्रवृत्ति अधिक होती है। इसके विपरीत संवेगात्मक रूप से सन्तुलित गर्भवती माताओं के शिशु कम रोते हैं। रोते समय बालकों की आन्तरिक तथा बाह्य शारीरिक स्थितियों में परिवर्तन आ जाता है जो बच्चे जितनी अधिक तेजी से रोते हैं उनकी शारीरिक क्रियायें; जैसे–हाथ-पैर पटकना, शरीर को पलटना, उतनी ही तीव्र होती है इसके अतिरिक्त रोते समय चेहरा लाल हो जाता है, साँस की गति अनियमित तथा अनियन्त्रित हो जाती है। एक माह से अधिक आयु के शिशु की आँखों से आँसू भी निकलते हैं। आयु वृद्धि के साथ-साथ बालक के क्रन्दन में कमी आती जाती है।

(B) बलबलाना (Babbling)—आयु वृद्धि के साथ-साथ बच्चों का रोना कम हो जाता है किन्तु उनके स्थान पर शिशु अस्पष्ट ध्वनियाँ निकालने लगता है जिसे 'बलबलाना' कहते हैं। बलबलाने से ही बालक में

शब्दोच्चारण का विकास होता है। पहले माह में अन्त से ही बालक कुछ सरल ध्वनियाँ निकालने लगता है। स्पष्ट बलबलाहट दो माह की आयु से प्रारम्भ हो जाती है और लगभग 1½ वर्ष की आयु तक चलती रहती है। बलबलाने से बालक का स्वरयन्त्र (larynx) परिपक्व होता है।

बलबलाने की प्रारम्भिक अवस्था में बालक एक ही ध्वनि की पुनरावृत्ति करता है। प्रारम्भ में बालक स्वरों को फिर बाद में व्यंजनों को उच्चारित करता है। ध्वनियों का उच्चारण बालक अन्य लोगों द्वारा बोले गये शब्दों को सुनकर करता है। प्रारम्भ में जब वह स्वरों को दुहराता है तो उसे आनन्द की अनुभूति होती है; जैसे—वह प्रारम्भ में बा, भा, पा, ना आदि स्वरों को दुहराता है तो उन्हीं से बाद में बाबा, मामा, पापा, नाना आदि शब्दों का विकास होता है।

बलबलाने की क्रिया अनुकरण पर आधारित होती है। बालक अपने माता-पिता तथा आसपास रहने वाले व्यक्तियों के द्वारा बोले गये शब्दों का निरन्तर अनुकरण करता रहता है और फिर स्वयं भी उन्हीं ध्वनियों को दोहराता है। धीरे-धीरे सम्बद्धता (conditioning) के आधार पर इन शब्दों का अर्थ भी समझने लगता है।

(C) हावभाव (Gestures)—हावभाव से तात्पर्य है कि अपने विभिन्न शारीरिक अंगों के माध्यम से अपने विचारों को प्रदर्शित करना। बालक के भाषा विकास में हावभाव भी महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। बालकों द्वारा हावभाव का प्रदर्शन भाषा के पूरक के रूप में किया जाता है। बच्चों में हावभाव की उत्पत्ति बलबलाने के साथ-साथ ही हो जाती है। बच्चा अपने हावभावों का प्रदर्शन, मुस्कराकर, हाथ फैलाकर, उँगली दिखाकर, मूक भाषा में व्यक्त करता है। अतः बच्चों के लिए हावभाव, विचारों की अभिव्यक्ति का एक सुगम साधन है जो शब्दों के स्थान पर प्रयुक्त किया जाता है।

हावभाव का प्रदर्शन बड़े बालकों द्वारा भी किया जाता है किन्तु बच्चों और बालकों के हावभाव के प्रदर्शन में पर्याप्त अन्तर पाया जाता है। बच्चों का प्रदर्शन मूक होता है जबकि बालकों का प्रदर्शन शब्दों के उच्चारण के साथ उनके अनुसार होता है। जैसे-जैसे बालक का भाषा विकास होता जाता है हाव-भाव का प्रदर्शन कम हो जाता है।

(ii) आकलन शक्ति का विकास (Development of Comprehension)—बालकों की वह क्षमता जिसके द्वारा वह दूसरों की क्रियाओं तथा हावभाव का अनुकरण कर लेता है 'आकलन शक्ति' कहलाती है। **हरलॉक** के मतानुसार, बालकों में आकलन शक्ति का विकास शब्दों के प्रयोग से पहले प्रारम्भ हो जाता है वह शब्दों को समझना पहले सीखता है और बोलना बाद में। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार शिशुओं में तीन चार माह की आयु से आकलन शक्ति का विकास प्रारम्भ हो जाता है। चार माह का शिशु माँ को पहचानकर मुस्कराने लगता है। 7-8 माह का बालक शब्दों का अनुसरण करने लगता है और एक वर्ष का बालक सरल निर्देशों को समझने लगता है। पाँच वर्ष की अवस्था में आकलन शक्ति का पर्याप्त विकास हो जाता है।

(iii) शब्द प्रयोग (Vocabulary)—आयु वृद्धि और आकलन शक्ति के विकास से बालक का शब्द भण्डार बढ़ता है। प्रारम्भ में वह संज्ञाओं (nouns) का प्रयोग करता है। दो वर्ष का बालक लगभग 50% संज्ञा शब्द बोल लेता है। दो संज्ञा शब्द खिलौनों, खाने-पीने की चीजों, वस्त्रों और व्यक्तियों से सम्बन्धित होते हैं। सबसे पहले बालक साधारण क्रिया सूचक शब्दों; जैसे—आओ, जाओ, खाओ, लो, दो का प्रयोग करता है। शिशु केवल इन शब्दों का प्रयोग ही नहीं करता अपितु उनका अर्थ भी समझता है। डेढ़ वर्ष की अवस्था में वह विशेषण शब्दों (adjectives) का प्रयोग भी करने लगते है। ये विशेषण शब्द भोज्य पदार्थों और खिलौनों से सम्बन्धित होते हैं। प्रारम्भ में बालकों द्वारा अच्छा, बुरा, गरम, ठंडा आदि विशेषण शब्दों का प्रयोग किया जाता है। सर्वनाम शब्दों का प्रयोग बालक तीन वर्ष की अवस्था में करने लगता है। प्रारम्भ में मैं, मेरा, तू, तेरा, यह, वह, तुम, तुझे, उसका, उसे आदि सर्वनामों का प्रयोग किया जाता है किन्तु प्रारम्भ में उसे यह ज्ञान नहीं होता है कि उसे कौन-सा शब्द कब बोलना चाहिए। अन्य प्रकार के शब्दों का प्रयोग वह पाँच-छः वर्ष की अवस्था में करता है।

बालकों के शब्द भण्डार के रूप—बालकों का शब्द भण्डार दो प्रकार का माना गया है—

(A) सामान्य शब्द भण्डार (General Vocabulary)—बालक सामान्य परिस्थितियों में जिन शब्दों का प्रयोग करता है वे उसके सामान्य शब्द कहलाते हैं। ये शब्द संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया सम्बन्धी होते हैं; जैसे—लेना, देना, आना, जाना, अच्छा, बुरा, मामा, नाना, पापा आदि।

(B) विशिष्ट शब्द भण्डार (Special Vocabulary)—विशिष्ट शब्द भण्डार के अन्तर्गत वे शब्द आते हैं जिन्हें बालक विशेष अवसरों पर बोलता है। अधिकांशतः तीन चार वर्ष की आयु में बालक विशिष्ट शब्दावली का प्रयोग करने लगता है। पाँच-छः वर्षों में विशिष्ट शब्दावली का काफी मात्रा में विकास हो जाता है। बालकों की विशिष्ट शब्दावली अनेक रूपों में प्रकट होती है।

(a) शिष्टाचार के शब्द (Etiquette Vocabulary)
(b) संख्यात्मक शब्द (Number Vocabulary)
(c) रंगों से सम्बन्धित शब्द (Colour Vocabulary)
(d) समय सम्बन्धी शब्द (Time Vocabulary)
(e) धन से सम्बन्धित शब्द (Money Vocabulary)
(f) अशिष्ट शब्द (Slong Vocabulary)

- **भाषा और पियाजे (Piaget and Language)**

पियाजे मानते थे कि मानसिक प्रतीकों में संसार को निरूपित करने का हमारा सबसे लचीला साधन भाषा है। इसके माध्यम से विचार को क्रिया से अलग करने के द्वारा सोचने की प्रक्रिया पहले से काफी अधिक सक्षम हो जाती है। शब्दों में सोचने से हम अपने तात्कालिक

अनुभवों की सीमाओं के पार जा सकते हैं। हम एक साथ अतीत, वर्तमान और भविष्य के बारे में सोच सकते हैं और अपनी अवधारणाओं को अनोखे तरीकों से जोड़ सकते हैं। जैसे कि हम किसी भूखी बिल्ली के केले खाने की या जंगल में रात को दैत्यों के उड़ने की कल्पना कर सकते हैं।

भाषा की शक्ति के बावजूद, पियाजे नहीं मानते थे कि यह बच्चों के संज्ञानात्मक विकास में कोई प्रमुख भूमिका निभाती है। इसके बजाय उसका दावा था कि ऐन्द्रिक एवं चालन गतिविधियों के फलस्वरूप अनुभव की आंतरिक छवियाँ निर्मित हो जाती हैं, जिन्हें फिर बच्चे शब्दों से नामांकित कर देते हैं, अर्थात् उन पर शब्दों के लेबिल लगा देते हैं। यह तथ्य पियाजे की धारणा के पक्ष में जाता है कि बच्चों के पहले पहल के शब्दों का आधार प्रभावशाली ऐन्द्रिक एवं चालन अनुभव होते हैं। वे ऐसी चीजों के लिए होते हैं, जो गति कर सकती हैं या जिनके साथ कुछ जा सकता है या फिर वे जाने-पहचाने कृत्यों के लिए होते हैं। इसके अलावा कुछ प्रारम्भिक शब्द ऐसे भी हैं जो शब्दरहित संज्ञानात्मक उपलब्धियों पर निर्भर प्रतीत होते हैं। उदाहरण के लिए जब छोटे बच्चे वस्तुओं के स्थायित्व सम्बन्धी समस्याओं को समझने लगते हैं तब वे उनके न दिखने पर गायब होना बताने वाले शब्दों, जैसे कि सब गए/गई का प्रयोग करते हैं जब वे अचानक समस्या को हल कर लेते हैं, तो वे सफलता या विफलता व्यक्त करने वाले शब्द इस्तेमाल करते हैं—''अहा'' और ''अरे''। इसके अलावा हम पहले देख चुके हैं कि शिशुओं को विभिन्न प्रकार की श्रेणियों का बोध काफी पहले हो जाता है, जबकि उनको व्यक्त करने वाले शब्द वे बाद में सीखते हैं।

फिर भी पियाजे ने बच्चों के संज्ञान या बोध को तेजी से विकसित करने में भाषा की ताकत को कम करके आँका है। उदाहरण के लिए इस पर ध्यान दें कि बच्चों की बढ़ती हुई शब्दावली उनके अवधारणात्मक कौशल को भी बढ़ाती है। अन्य शोधों से भी इस बात की पुष्टि होती है कि भाषा संज्ञानात्मक विकास की मात्र सूचक न होकर उसका एक शक्तिशाली स्रोत है।

- **भाषा और वाइगोत्स्की (Language and Vygotsky)**

भाषा वाइगोत्स्की के सिद्धान्त के लिए भी केन्द्रीय है और विकास में तीन अलग–अलग भूमिकाएँ निभाती है। सबसे पहले, यह शिक्षार्थियों को दूसरों के पास पहले से मौजूद ज्ञान तक पहुँच प्रदान करती है। दूसरा, भाषा एक संज्ञानात्मक उपकरण है जो उन्हें दुनिया के बारे में सोचने और समस्याओं को हल करने की अनुमति देती है। तीसरे, भाषा हमारी अपनी सोच को विनियमित करने और प्रतिबिम्बित करने का एक साधन है।

पियाजे की तरह ही वाइगोत्स्की ने भी बच्चों को खुद से बात करते हुए देखा, लेकिन यह भी देखा कि कुछ संदर्भों में यह दूसरों की तुलना में अधिक बार होता है, विशेष रूप से जब वे समस्याओं को हल करने या महत्वपूर्ण लक्ष्यों को प्राप्त करने का प्रयास करते हैं और इस गैर-सामाजिक भाषण में काफी वृद्धि हो जाती है जब भी ये युवा समस्या-समाधानकर्ता अपने उद्देश्यों को पाने में बाधाओं का सामना करते हैं।

इसके आधार पर उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि यह आत्म-वार्ता अहंकेंद्रित नहीं, बल्कि सम्प्रेषणीय है। उन्होंने इस स्व-नियमन के लिए भाषा के इस उपयोग को निज वाक कहा है, जो छोटे बच्चों को रणनीतियों की योजना बनाने और उनके व्यवहार को विनियमित करने में मदद करता है ताकि उनके लक्ष्यों को पूरा कर सकने की अधिक सम्भावना हो।

इसके माध्यम से देखा गया है कि, इस प्रकार भाषा बच्चों को अधिक संगठित और कुशल समस्या हल करने के लिए संज्ञानात्मक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। वाइगोत्स्की के अनुसार, भाषा और सोच शुरू में अलग-अलग संस्थाएँ हैं, लेकिन कुछ समय बाद वे आपस में जुड़ जाती हैं। भाषा और सोच का यह विलय 3 से 7 वर्ष की आयु के बीच होता है। उसके बाद भाषा और सोच समानान्तर और अविभाज्य हैं तथा एक-दूसरे को निर्धारित करते हैं। इसका एक अच्छा उदाहरण एक बच्चे को समझने के लिए जोर से पढ़ना है।

वाइगोत्स्की ने यह भी देखा कि निजी वाक उम्र के साथ अधिक संक्षिप्त हो जाते हैं, पूरे वाक्यांशों से एकल शब्दों तक प्रगति करते हैं और अंत में केवल सरल होठों के हिलने तक सीमित हो जाते हैं जो कि बड़े बच्चों में अधिक आम है। उनका विचार था कि निजी भाषण कभी पूरी तरह से गायब नहीं होता है; यह आंतरिक हो जाता है और आंतरिक वाक में बदल जाता है। यह भूमिगत होकर चुप हो जाता है, लेकिन फिर भी एक संज्ञानात्मक स्व-मार्गदर्शन प्रणाली के रूप में कार्य करता है और हम अपनी रोजमर्रा की सोच और कार्यों को व्यवस्थित और विनियमित करने के लिए हर दिन इसका उपयोग करते हैं।

वाइगोत्स्की ने तर्क दिया कि जो बच्चे बहुत अधिक निजी भाषण का उपयोग करते हैं, वे उन लोगों की तुलना में अधिक सामाजिक रूप से सक्षम होते हैं जो ऐसा नहीं करते। उन्होंने तर्क दिया कि निजी भाषण अधिक सामाजिक संचार बनने में एक प्रारम्भिक परिवर्तनकाल का प्रतिनिधित्व करता है। वाइगोत्स्की के लिए, जब छोटे बच्चे खुद से बात करते हैं, तो वे अपने व्यवहार को संचालित करने और खुद को निर्देशित करने के लिए भाषा का उपयोग करते हैं।

शोधकर्ताओं से वाइगोत्स्की के इस दृष्टिकोण को समर्थन मिला है कि निजी भाषण बच्चों के विकास में सकारात्मक भूमिका निभाता है। शोधकर्ताओं ने यह भी खुलासा किया है कि जो बच्चे निजी भाषण का उपयोग करते हैं वे अधिक चौकस होते हैं और निजी भाषण का उपयोग नहीं करने वाले बच्चों की तुलना में अपने प्रदर्शन में सुधार करते हैं।

- **नोआम चॉम्स्की : सहज या देशी सिद्धान्त**

नोआम चॉम्स्की अमेरिकी मूल के एक भाषाविद्, दार्शनिक और संज्ञानात्मक वैज्ञानिक हैं। उन्होंने पर्यावरण के स्थान पर आनुवंशिकता को प्राथमिक महत्व दिया। उनके अनुसार सभी मनुष्य भाषा सीखने के लिए आनुवंशिक रूप से सक्षम हैं। भाषा के सम्पर्क में आने से उसका विकास शुरू हो जाता है। नोआम चॉम्स्की ने प्रस्तावित किया कि सभी मनुष्य भाषा अधिग्रहण यंत्र (LAD) के साथ पैदा होते हैं।

भाषा अधिग्रहण यंत्र एक सहज, आनुवंशिक रूप से नियंत्रित मानसिक क्षमता है जो एक शिशु को भाषा प्राप्त करने और उत्पादन करने में सक्षम बनाती है। यह बच्चों को भाषा को नियंत्रित करने वाले नियमों

को सीखने के लिए प्रेरित करता है। उन्होंने प्रस्तावित किया कि भाषा अधिग्रहण यंत्र के कारण बच्चे अपने परिवेश से सहजता से भाषा प्राप्त करते हैं और बिना सीखे भी स्वयं व्याकरण के नियम उत्पन्न करते हैं। उन्होंने इस स्व-निर्मित व्याकरण को सार्वभौमिक व्याकरण कहा, क्योंकि उनके अनुसार संरचनात्मक नियमों के कुछ समूह मनुष्यों के लिए सहज हैं तथा संवेदी अनुभव से स्वतंत्र हैं।

चॉम्स्की महत्वपूर्ण अवधि या संवेदनशील अवधि परिकल्पना में भी विश्वास करते थे। इसके अनुसार बच्चे के जीवन के पहले कुछ वर्ष वह महत्वपूर्ण अवधि होती है, जिसमें बच्चा पर्याप्त उत्तेजनाओं के साथ सहजता से भाषा प्राप्त करता है। उनके अनुसार भाषा अधिग्रहण यंत्र उम्र के साथ कमजोर हो जाता है जिसके बाद भाषा अधिग्रहण अधिक कठिन और अंततः कम सफल होता है।

VI. सृजनात्मकता क्षमता का विकास (Creativity Ability of Development)

'सृजनात्मक' शब्द अंग्रेजी के क्रियेटिविटी (Creativity) से बना है। इस शब्द के समानान्तर विधायकता, उत्पादन, रचनात्मकता डिस्कवरी आदि का प्रयोग होता है। **फादर कामिल बुल्के** ने क्रियेटिक शब्द के समानान्तर, सृजनात्मक, रचनात्मक, सर्जक शब्द बताए। डा. रघुवीर ने इसका अर्थ सर्जन, उत्पन्न करना, सर्जित करना, बनाना बताया है।

सृजन (Creativity) वह अवधारणा है जिसमें उपलब्ध साधनों से नवीन या अनजानी वस्तु, विचार या धारणा को जन्म दिया जाता है। सृजनात्मक से अभिप्राय है रचना सम्बन्धी योग्यता, नवीन उत्पाद की रचना। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सृजनात्मक स्थिति अन्वेषणात्मक होती है। **रूश** के अनुसार—"सृजनात्मकता मौलिकता है जो वास्तव में किसी भी प्रकार की क्रिया में घटित होती है।"

"Creativity is originally which actually can occur in any kind of activity." **—Prof. Ruch**

सृजनात्मकता ज्ञान, सूचना तथा कौशल के क्षेत्र में पाई जाती है। नवीन तथ्यों, सिद्धान्तों का प्रतिपादन, सूचना ग्रहण करने तथा कराने की नवीन प्रणालियों तथा नवीन वस्तु, विचार की प्रस्तुति सृजनात्मकता के अन्तर्गत आती है।

(i) शैशवावस्था में सृजनात्मक विकास (Development of Creativity in Infancy)

सृजनात्मकता उस योग्यता को बताती है, जो किसी वस्तु को खोजने या सृजन से सम्बन्धित होती है। शैशवावस्था में शिशु बहुत कल्पनाशील होता है। वह अपनी कल्पना के आधार पर ही नई वस्तुओं का सृजन करता है, जैसे—कागज की नाव बनाना, पतंग बनाना, उड़ने वाला जहाज बनाना, कागज पर तरह-तरह के चित्र बनाना व कल्पना के आधार पर उनमें रंग भरना आदि। शैशवावस्था में सृजनात्मक क्षमता का विकास भली-भाँति होना आवश्यक है, क्योंकि इसमें हम बालक की कल्पना शक्ति का पूरा प्रयोग करते हैं। इस क्षमता का विकास करके हम उनके भावी जीवन का निर्माण करते हैं व शिशु के व्यक्तित्व का उचित विकास करते हैं।

(ii) बाल्यावस्था में सृजनात्मक विकास (Development of Creativity in Childhood)

प्रत्येक बच्चे में सृजन की क्षमता जन्मजात होती है, छोटे बच्चों के खेलों में यह सृजनात्मक शक्ति स्पष्ट रूप से झलकती है। रचनात्मक कार्यों द्वारा वह सीखते और आगे बढ़ते हैं। इसके लिए हम बच्चों को कुछ स्वयं करने का अवसर दें, आस-पास की वस्तुओं का ज्ञान वह अपनी ज्ञानेन्द्रियों द्वारा प्राप्त करें और अनुभव करें। बच्चों की कल्पना निरीक्षण व स्मरण शक्ति के विकास द्वारा ही उनकी सृजनात्मक क्षमता विकसित होगी। सृजनात्मक क्षमता के विकास द्वारा ही वह भावी जीवन की तैयारी करेंगे।

बच्चों की सृजनात्मक शक्ति का विकास हम कई प्रकार की क्रियाओं द्वारा कर सकते हैं, जैसे— खेल, कला, नृत्य, अभिनय और बेकार की वस्तुओं से सामग्री तैयार करना आदि।

(iii) किशोरावस्था में सृजनात्मक विकास (Development of Creativity in Adolescence)

किशोरावस्था परिवर्तन की अवस्था है। इस अवस्था में उसके अन्दर बहुत सारे शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक व सामाजिक परिवर्तन होते हैं। वह न तो बच्चा रहता है न प्रौढ़। इस कारण से वह अपने को वातावरण से भली-भाँति समायोजित नहीं कर पाते। उसमें कल्पना की अधिकता होती है, वह सृजनात्मक कार्य करके अपनी कल्पना को यथार्थ का रूप देना चाहते हैं।

यदि किशोर/किशोरी की सृजनात्मक क्षमता को उचित वातावरण देकर उसका अधिकतम विकास किया जाये, तो वह जीवन में बहुत महत्वपूर्ण उपलब्धियाँ हासिल कर सकता है तथा अपनी शक्ति का सदुपयोग करके अपने को कुण्ठा व निराशा से बचा सकता है।

- **सृजनात्मकता के विकास की अवस्थाएँ (Stages of Creativity Development)**

सृजनात्मकता विकास की निम्न पाँच अवस्थाएँ होती हैं—

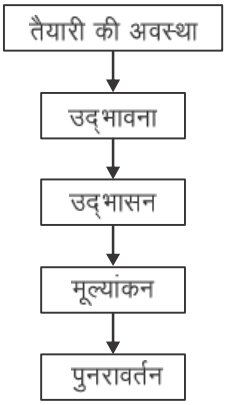

(i) **तैयारी की अवस्था**—प्रथम सोपान तैयारी की अवस्था में विचारक अपनी समस्या को स्पष्ट करता है। समस्या के समाधान के लिए, जिसे वह आवश्यक समझता है, उस सामग्री एवं तथ्यों को एकत्र करता है। यह अध्ययन का समय होता है। इस काल में व्यक्ति प्रदत्तों को सुव्यवस्थित करता है, समस्या को परिभाषित करने के लिए, प्रासंगिक विचारों, तथ्यों तथा सामग्री एवं अन्य विभिन्न अंशों की संयोजना इस ढंग से करता है, जिससे लक्ष्य की प्राप्ति हो सके। व्यक्ति में सृजन करने की अन्तःप्रेरणा होती है।

(ii) **उद्भावन**–दूसरी अवस्था उद्भावन की है जिसमें व्यक्तित्व अपने विचारों को व्यवस्थित, पुनर्व्यवस्थित तथा परीक्षण करता है। यह समस्या के समाधान के विषय में काल्पनिक चिन्तन की अवस्था है। इस काल में वे विचार मंद पड़ने लगते हैं जो समस्या समाधान में बाधक थे। दूसरी ओर वह उन संकेतों का आभास प्राप्त करता है जो समस्या में सहायक होते हैं। इस काल में अचेतन स्तर पर समस्या का समाधान होता है।

(iii) **उद्भासन**–इस सोपान में अकस्मात्, समाधान उद्भाषित होता है। इस अवस्था में व्यक्ति सहसा समस्या की मुख्य बातों को समझ लेता है और समस्या के विभिन्न सम्बन्धों का प्रत्यक्षण कर लेता है। अनेक सृजनशील व्यक्ति इस बात की पुष्टि करते हैं कि सृजनात्मक विचार सहसा उदय होते हैं।

(iv) **मूल्यांकन**–इस अवस्था में वह अपने सारे प्रयत्नों का मूल्यांकन करता है। बहुधा गलत हो जाने पर विचारक पुनः उसी बिन्दु पर पहुँच जाता है जहाँ से उसने प्रारम्भ किया था।

(v) **पुनरावर्तन**–मूल्यांकन के पश्चात् यदि कुछ परिवर्तन अपेक्षित होता है अथवा अन्य अपेक्षाकृत गौण समस्या के समाधान की अपेक्षा होती है, तब वह पुनर्निरीक्षण अथवा पुनरावर्तन करता है।

- **सृजनात्मकता के क्षेत्र (Scope of Creativity)**

सृजनात्मकता के विभिन्न क्षेत्र हो सकते हैं, जिन्हें निम्नांकित सारणी से स्पष्टतया समझा जा सकता है–

सृजनात्मकता का क्षेत्र	क्षेत्र के अन्तर्गत
1. विज्ञान (Science)	भौतिकी, रसायन, औषधि निर्माण, प्रकृति विज्ञान, जीव विज्ञान से सम्बन्धित हर प्रकार के आविष्कार एवं अनुसंधान।
2. कला–कौशल (Art-Skill)	संगीत, नृत्य, चित्रकला, वास्तुकला तथा धातु, काष्ठ, चर्म, कागज आदि से सम्बन्धित कौशल, भवन निर्माण कला।
3. तकनीकी (Technology)	मशीनों, उपकरणों, उनके यंत्रों और पुर्जों आदि का निर्माण।
4. साहित्य (Literature)	कविता, कहानी, नाटक, उपन्यास, निबन्ध आदि की रचना, भाषण कला, लेखन कला।
5. सामाजिक क्षेत्र (Social Field)	धार्मिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, शैक्षिक आदि क्रियायें तथा सम्बन्धित समस्याओं का समाधान।
6. व्यक्तिगत क्षेत्र (Personal Field)	व्यक्ति के अपने व्यक्तिगत जीवन का क्षेत्र–कोई व्यवसाय, उद्योग या कार्य, सामाजिक, राजनैतिक, प्रशासनिक आदि।
7. मानसिक प्रक्रियाओं का क्षेत्र (Field of Mental Process)	कल्पना, तर्क, चिन्तन, समस्या–समाधान और अभिव्यक्ति।

- **सृजनात्मकता के सिद्धान्त (Theories of Creativity)**

सृजनात्मकता के सिद्धान्त निम्नलिखित हैं–

(i) **मनोविश्लेषणात्मक सिद्धान्त**–फ्रॉयड एवं जुंग ने यह धारणा दी है। यह दमित अचेतन ही इच्छाओं की सृजनशीलता का निर्धारण करता है।

(ii) **साहचर्यात्मक सिद्धान्त**–इस सिद्धान्त के अनुसार सृजनात्मक चिन्तन के अन्तर्गत साहचर्यात्मक तत्वों के नए संयुक्तियों के तत्व जितने ही अधिक परस्पर दूरस्थ होंगे, प्रक्रिया उतनी ही सृजनात्मक होगी।

(iii) **प्रक्रिया सिद्धान्त–रीसमैन** ने (सन् 1931) सृजनात्मक प्रक्रिया के 6 आवश्यक सोपान बताए हैं–कठिनाई का निरीक्षण, समस्त उपलब्ध सूचनाओं का सर्वेक्षण, आवश्यकता का विश्लेषण, वस्तुनिष्ठ समाधानों की रचना, समाधानों का आलोचनात्मक विश्लेषण, नवीन विचार का जन्म। कुछ मनोवैज्ञानिकों ने सृजनात्मक विकास की पाँच अवस्थाएँ बताई हैं–तैयारी की अवस्था, उद्भावन, उद्भासन, मूल्यांकन, पुनरावर्तन।

(iv) **स्थानान्तरण सिद्धान्त (Transfer Theory)**–बहुत–से मनोवैज्ञानिकों का विश्वास है कि सृजनात्मक कृतियाँ ही समस्या का समाधान हैं तथा वैज्ञानिक अभियंता आदि वातावरण में समस्यायें खोजते हैं, सृजनात्मक चिन्तन और समस्या समाधान होने पर, समस्या समाधान के द्वारा सृजनात्मक चिन्तन को तथा सृजनात्मक चिन्तन के द्वारा समस्या समाधान को समझा जा सकता है। यह समानता सोचने में सहायक होती है कि प्रत्येक समाधान में कुछ न कुछ सृजनात्मकता पाई जाती है।

(v) **प्रतिभा का सिद्धान्त (Theory of Giftedness)**–स्पीयरमैन ने बुद्धि को सृजनात्मक चिन्तन का आधार माना है जिसे उन्होंने 'जी' (G) घटक कहा है, जो समस्त योग्यताओं का सार है थर्स्टन ने भी इन्हीं की भाँति सृजनात्मक चिंतन की व्याख्या बौद्धिक आधार पर की है। इस प्रकार सृजनात्मक चिंतन का सिद्धान्त इन्हीं के बुद्धि के सिद्धान्त से सम्बन्धित है। इनके अनुसार जिस व्यक्ति का जितना अधिक संपर्क कार्य के पूर्व और अचेतन पक्ष में होगा, वह उतना ही अधिक सृजनशील होगा।

(vi) **प्रक्रिया सिद्धान्त (Process Theory)**–**रीसमैन** ने (सन् 1931) सृजनात्मक प्रक्रिया के 6 आवश्यक सोपान बताए हैं–कठिनाई का निरीक्षण, समस्त उपलब्ध सूचनाओं का सर्वेक्षण, आवश्यकता का विश्लेषण, वस्तुनिष्ठ समाधानों की रचना, समाधानों का आलोचनात्मक विश्लेषण, नवीन विचार का जन्म। कुछ मनोवैज्ञानिकों ने सृजनात्मक विकास की पाँच अवस्थाएँ बताई हैं–तैयारी की अवस्था, उद्भावन, उद्भासन, मूल्यांकन, पुनरावर्तन।

(vii) **अभिप्रेरणात्मक सिद्धान्त (Motivational Theory)**–सृजनशील व्यक्ति किसी समस्या के समाधान के लिए प्रेरित होता है। रोजर्स (सन् 1961) के अनुसार यदि मनुष्य की सृजनात्मक प्रवृत्ति में अभिप्रेरणा विद्यमान हो तो स्वयं को प्रत्यक्षीकृत करने का प्रयास करेगा। वह अपनी विभवता का

अनुभव करेगा तथा उच्च निष्पत्ति को प्राप्त करने का प्रयास करेगा।

(viii) मानसिक स्वास्थ्य का सिद्धान्त (Mental Health Theory)—इस सिद्धान्त का आधार मनोविश्लेषणात्मक है। मास्लो (1958) का विश्वास है कि—सृजनात्मकता पूर्ण व्यक्तित्व संगठन या सचेतन मस्तिष्क और पूर्व सचेतन के मध्य अवरोध समाप्त करते हैं। इस प्रकार सचेतन से सामग्री पुनः प्राप्त करके यथार्थ जगत् में लौट आता है। इस प्रकार व्यक्ति पूर्ण क्रियाशील बन जाता है। व्यक्ति उच्च सिद्धीकरण स्तरों पर उच्च संश्लेषणात्मक योग्यताओं को विकसित करता है और अपनी शक्तियों का प्रयोग बौद्धिक कार्यों में करता है।

(ix) संज्ञानात्मक सिद्धान्त (Cognitive Theory)—इस सिद्धान्त के अन्तर्गत यह देखा जाता है कि सृजनशील व्यक्ति किस प्रकार वस्तुओं एवं घटनाओं का प्रत्यक्षीकरण एवं चिन्तन करता है।

(x) स्वतन्त्रता सिद्धान्त (Independence Theory)—इस सिद्धान्त का दृष्टिकोण है कि बालकों को उनकी सृजनात्मकता की सुरक्षा हेतु अध्यापकों तथा अभिभावकों को सहायता करनी चाहिए। इसलिए बालकों को प्रारम्भिक प्रयासों में ऋणात्मक मूल्यांकन के परिणामों से अवगत नहीं कराना चाहिए।

(xi) व्यक्तित्व शीलगुण का सिद्धान्त (Personality Trait Theory)—यह सिद्धान्त व्यक्तित्व के उन शीलगुणों से सम्बन्धित है जो सृजनशील व्यक्ति में पाए जाते हैं। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन विभिन्न क्षेत्रों में सृजनात्मक व्यक्ति से सम्बन्धित परिणामों के आधार पर हुआ है। सृजनात्मक व्यक्ति अन्य व्यक्तियों से भिन्न होते हैं, क्योंकि उनके व्यक्तित्व में ऐसी विशेषताएँ होती हैं, जो सृजनात्मक उत्पादक के लिए प्रेरणात्मक होती हैं।

(xii) बुद्धि सिद्धान्त (Intelligence Theory)—इस सिद्धान्त के अनुसार सृजनात्मकता को गिलफोर्ड (सन् 1950) ने केन्द्राभिमुख उत्पादन प्रक्रिया का प्रयोग आवृत्ति, विषय वस्तुओं, अभिन्न इकाइयों, वर्गों, सम्बन्धों, प्रणालियों, रूपान्तरणों और उपयोग के उत्पादकों को देने के लिए किया जाता है, तब उसे अशाब्दिक सृजनात्मकता कहते हैं।

11. बाल विकास को प्रभावित करने वाले कारक (Factors Affecting of Child Development)

प्राणी के गर्भ में आने से लेकर पूर्ण प्रौढ़ता प्राप्त होने की स्थिति मानव विकास है। मानव का विकास अनेक कारकों द्वारा होता है। इनमें दो प्रमुख कारक हैं—जैविक एवं सामाजिक। जैविक विकास का दायित्व माता-पिता पर होता है और सामाजिक विकास का वातावरण पर। बालक लगभग 9 माह अर्थात् 280 दिन तक माँ के गर्भ में रहता है और तब से ही उसके विकास की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। जब भ्रूण विकसित होकर पूर्ण बालक का स्वरूप ग्रहण कर लेता है तो प्राकृतिक नियमानुसार उसे गर्भ से पृथ्वी पर आना ही पड़ता है। तब बालक के विकास की प्रक्रिया प्रत्यक्ष रूप से विकसित होने लगती है। बालक के विकास पर वंशानुक्रम के अतिरिक्त वातावरण का भी प्रभाव पड़ने लगता है। जन्म से सम्बन्धित विकास को वंशानुक्रम तथा समाज से सम्बन्धित विकास को वातावरण कहते हैं। इसे प्रकृति (Nature) तथा पोषण (Nurture) भी कहा जाता है। वुडवर्थ का कथन है कि एक पौधे का वंशक्रम उसके बीज में निहित है और उसके पोषण का दायित्व उसके वातावरण पर है। बाल विकास को प्रभावित करने वाले दो कारक हैं—

1. वंशानुक्रम, 2. वातावरण

12. वंशानुक्रम का अर्थ (Meaning of Heredity)

कोई भी बालक अपने माता-पिता तथा अन्य पूर्वजों के जो विभिन्न शारीरिक और मानसिक गुण गर्भाधान के समय प्राप्त करता है वह इसके वंशानुगत गुण (Heredity traits) कहलाते हैं। अतः जन्म से पूर्व प्राप्त होने वाले सभी गुण वंशानुगत होते हैं इसलिए वंशानुक्रम को व्यक्तित्व के "जन्मजात गुणों का समूह" कहा जाता है। किन्तु जन्म के बाद जो परिस्थितियाँ इन शारीरिक और मानसिक गुणों के विकास को प्रभावित करती हैं वे वातावरण सम्बन्धी होती हैं। वंशानुक्रम प्रक्रिया के कारण ही मानव से केवल मानव शिशु ही पैदा होता है। इसी शक्ति के कारण पशु से पशु, पक्षी से पक्षी और वनस्पति से वनस्पति का प्रादुर्भाव होता है। अतः आनुवंशिकता जन्मजात शक्ति है जो प्राणी के रंगरूप, आकृति, यौन, बुद्धि तथा विभिन्न शारीरिक और मानसिक क्षमताओं का निर्धारण करती है।

कुछ प्रमुख परिभाषायें निम्नलिखित हैं—

वुडवर्थ के अनुसार—"वंशानुक्रम उन सभी कारकों को सम्मिलित करता है जो व्यक्ति के जीवन प्रारम्भ करने के समय से ही उपस्थित होते हैं। जन्म के समय नहीं अपितु गर्भाधान के समय अर्थात् जन्म से नौ माह पूर्व ही उपस्थित होते हैं।"

"Heredity covers all the factors that were present in the individual when he began life, not at birth but at the time of conception about nine months before birth" **—Woodworth**

जेम्स ड्रेवर के अनुसार—"वंशानुक्रम से अभिप्राय माता और पिता के शारीरिक और मानसिक गुणों का संतानों में हस्तान्तरण है।"

"Heredity is the transmission of physical and mental characteristics from parents to offsprings." **—James Draver**

वंशानुक्रम के नियम और सिद्धान्त

1. बीजकोष की निरन्तरता का नियम	प्रतिपादक बीजमैन बालक को जन्म देने वाला बीजकोष कभी नष्ट नहीं होता है।
2. समानता का नियम	जैसे माता–पिता होते हैं वैसी ही उनकी संतान होती है।
3. विभिन्नता का नियम	बालक अपने माता–पिता के बिल्कुल समान न होकर कुछ भिन्न होते हैं।
4. प्रत्यागमन का नियम	बालक में अपने माता–पिता के विपरीत गुण पाये जाते हैं।
5. अर्जित गुणों के संक्रमण का नियम	व्यक्तियों द्वारा जो अपने जीवन में अर्जित किया जाता है वह उनके आने वाली पीढ़ियों को प्राप्त नहीं होता है।
6. मेण्डल का नियम	प्रतिपादक–ग्रेगर जॉन मेण्डल प्रयोग–मटर और चूहे पर वर्णसंकर प्राणी या वस्तुएँ अपने मौलिक या सामान्य रूप की ओर अग्रसर होती है।
7. संयोग का नियम	वंशानुक्रम की कभी भी सत्य भविष्यवाणी करना सम्भव नहीं है।
8. चयनित गुणों का नियम	केवल कुछ गुणों में ही वंशपरम्परा होती है।

13. वंशानुक्रम की प्रक्रिया (Process of Heredity)

- मानव शरीर कोषों (Cells) का योग होता है। शरीर का आरम्भ केवल एक कोष से होता है, जिसे 'संयुक्त कोष' (Zygote) कहते हैं। यह कोष 2, 4, 8, 16, 32 और इसी क्रम' में संख्या में आगे बढ़ता चला जाता है।
- **'संयुक्त कोष'** दो उत्पादक कोषों (Germ Cells) का योग होता है। इनमें से एक कोष पिता का होता है जिसे **पितृकोष (Sperm)** और दूसरा कोष माता का होता है जिसे **मातृकोष (Ovum)** कहते हैं। **'उत्पादक कोष'** भी **संयुक्त कोष** के समान संख्या में बढ़ते हैं।
- पुरुष और स्त्री के प्रत्येक कोष में 23–23 गुणसूत्र (Chromosomes) होते हैं। इस प्रकार संयुक्त कोष में **'गुण सूत्रों'** के जोड़े 23 जोड़े होते हैं। 'गुणसूत्रों' के सम्बन्ध में **मन (Munn)** ने लिखा है–''हमारी सब असंख्य परम्परागत विशेषताएँ इन 46 गुणसूत्रों में निहित रहती हैं। ये विशेषताएँ गुणसूत्रों में विद्यमान पित्र्यैक (Genes) में होती है।''
- गुणसूत्र (Chromosomes) दो प्रकार के होते हैं–
- X गुणसूत्र तथा Y गुणसूत्र (Chromosomes) पुरुषों में यह दोनों प्रकार के गुण सूत्र पाए जाते हैं। परन्तु स्त्रियों में X गुणसूत्र (Chromosomes) पाए जाते हैं। गुणसूत्र हमेशा जोड़े (Pairs) में ही पाए जाते हैं।
- X गुणसूत्र (Chromosomes) आकार में बड़ा और Y गुणसूत्र (Chromosomes) आकार में छोटा रहता है। इस प्रकार पुरुष के जर्म-सेल के न्यूक्लियस में 23 जोड़े या 46 गुणसूत्र ही होते हैं।
- जब स्त्री पुरुष के XY गुणसूत्र मिलते हैं तो लड़का और जब XX गुणसूत्र मिलते हैं तो लड़की उत्पन्न होती है।
- माता-पिता से प्राप्त जीन्स में, जिसके जीन्स अधिक शक्तिशाली होते हैं, उससे सम्बन्धित गुण ही बालक को अधिक मात्रा में प्राप्त होते हैं।

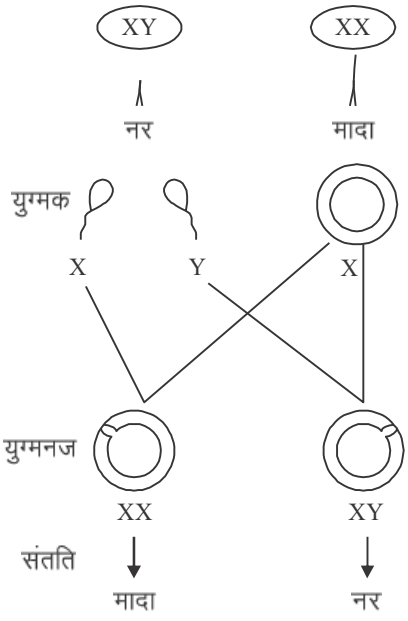

14. वंशानुक्रम का प्रभाव (Effect of Heredity)

आनुवंशिकता का प्रभाव निम्नलिखित रूप से पड़ता है–

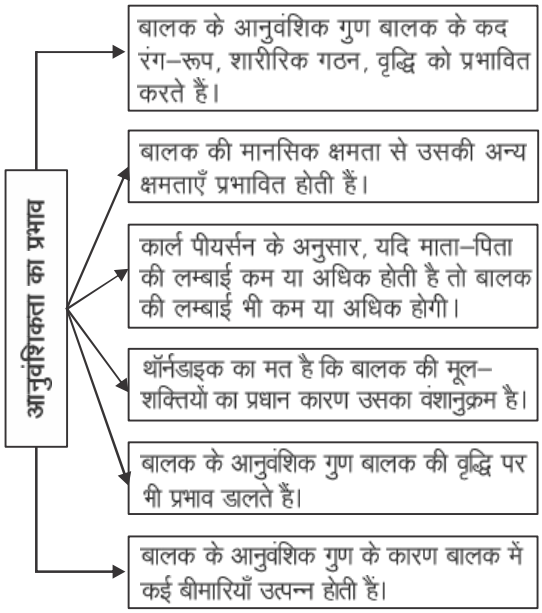

15. वातावरण की अवधारणा (Concept of Environment)

वातावरण से तात्पर्य बाह्य शक्तियों, परिस्थितियों तथा प्रभावों से है जो जन्म के बाद किसी प्राणी को उसके विकास में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करते हैं अतः बालक के विकास को निर्धारित और प्रभावित करने वाले आनुवंशिक तत्वों को छोड़कर शेष सभी तत्व वातावरण के अन्तर्गत आते हैं। किसी भी बालक को वंशानुक्रम गुण जन्म से पूर्व ही गर्भाधान के समय प्राप्त हो जाते हैं किन्तु गर्भाधान के पश्चात् गर्भकालीन विकास से ही जो दशायें व परिस्थितियाँ उसके विकास को प्रभावित करती हैं वे वातावरण सम्बन्धी होती हैं।

वातावरण एक व्यापक शब्द है। इसके अन्तर्गत वे सभी भौतिक तथा अभौतिक वस्तुयें शामिल रहती हैं जिनका प्रभाव व्यक्ति के सर्वांगीण विकास पर पड़ता है।

वातावरण को पर्यावरण भी कहा जाता है। पर्यावरण दो शब्दों से मिलकर बना है। परि + आवरण। 'परि' का अर्थ है चारों ओर, और 'आवरण' का अर्थ है 'ढकना'। अतः वे सभी वस्तुयें हमें चारों ओर से घेरे हुये हैं पर्यावरण के अन्तर्गत आती हैं। पर्यावरण के प्रभाव से कोई व्यक्ति अछूता नहीं रह सकता है अतः व्यक्ति को जैसा वातावरण मिलता है वैसा ही उसका विकास होता है। अनुपयुक्त वातावरण में किसी भी प्राणी का समुचित विकास सम्भव नहीं है। गर्भाधान के बाद जन्म से पूर्व ही वातावरणीय तत्वों का प्रभाव बालक के विकास पर पड़ने लगता है। फिर जन्म के बाद उसे आयु के प्रत्येक स्तर पर भिन्न-भिन्न प्रकार का वातावरण मिलता है। इसलिए दो व्यक्तियों के आनुवंशिक गुण समान होने पर भी वातावरणीय भिन्नता होने पर उनमें व्यक्तिगत भिन्नता पायी जाती है। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक **वाटसन** (Watson) ने कहा है "मुझे नवजात शिशु दे दो, मैं उसे जो चाहूँ बना सकता हूँ।"

प्रमुख परिभाषायें निम्नलिखित हैं–

बोरिंग, लैंगफील्ड एवं वील्ड के अनुसार–"व्यक्ति के वातावरण के अन्तर्गत उन सभी उत्तेजनाओं का योग आता है जिन्हें वह जन्म से मृत्यु तक ग्रहण करता है।"

"A person's environment consists of the sum total of the stimulation which he receives from his conception until his death."

— Boring, Langfield and Wield

पी. जिसबर्ट के अनुसार–"पर्यावरण वे सभी वस्तुएँ हैं जो किसी एक वस्तु को चारों ओर से घेरे हुये हैं तथा उसे प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करती है।"

"Environment is anything immediately surrounding an object and exerting a direct influence on it." **—P. Gisburt**

विकास = आनुवंशिकता × वातावरण

Development = Heredity × Environment

$$D = H \times E$$

अर्थात् किसी एक ही अनुपस्थिति हुई तो विकास असम्भव है।

16. वातावरण का प्रभाव (Effect of Environment)

कुछ मनोवैज्ञानिकों के अनुसार वातावरण के प्रभाव का वर्णन निम्न प्रकार है–

I. **शारीरिक अन्तर पर प्रभाव–फ्रेंज बोन्स** (Franz Bons) का मत है कि विभिन्न प्रजातियों के शारीरिक अन्तर का कारण वंशानुक्रम न होकर वातावरण है।

II. **मानसिक विकास पर प्रभाव–गोर्डन** (Gordon) का मत है कि उचित सामाजिक और सांस्कृतिक वातावरण न मिलने पर मानसिक विकास की गति धीमी हो जाती है।

III. **प्रजाति की श्रेष्ठता पर प्रभाव–क्लार्क** (Clark) का मत है कि कुछ प्रजातियों की बौद्धिक श्रेष्ठता का कारण वंशानुक्रम न होकर वातावरण है।

IV. **बुद्धि पर प्रभाव–कैंडोल** (Candolle) का मत है कि बुद्धि के विकास में वंशानुक्रम की अपेक्षा वातावरण का प्रभाव कहीं अधिक पड़ता है।

V. **व्यक्तित्व पर प्रभाव–कूले** (Colley) का मत है कि व्यक्तित्व के निर्माण में वंशानुक्रम की अपेक्षा वातावरण का अधिक प्रभाव पड़ता है। उसने सिद्ध किया है कि कोई भी व्यक्ति उपयुक्त वातावरण में रहकर अपने व्यक्तित्व का निर्माण करके महान् बन सकता है।

VI. **अनाथ बच्चों पर प्रभाव**–समाज-कल्याण केन्द्रों में अनाथ और परावलम्बी बच्चे आते हैं। वे साधारणतः निम्न परिवारों के होते हैं, पर केन्द्रों में उनका अच्छी विधि से पालन किया जाता है, उनको अच्छे वातावरण में रखा जाता है और उनके साथ अच्छा व्यवहार किया जाता है।

VII. **जुड़वाँ बच्चों पर प्रभाव**–जुड़वाँ बच्चों के शारीरिक लक्षणों, मानसिक शक्तियों और शैक्षिक योग्यताओं में अत्यधिक समानता होती है। **न्यूमैन** (Newman), **फ्रीमैन** (Freeman) और **होलजिंगर** (Holzinger) ने 20 जोड़े जुड़वाँ बच्चों को अलग-अलग वातावरण में रखकर उनका अध्ययन किया। उन्होंने एक जोड़े के एक बच्चे को गाँव के फार्म पर और दूसरे को नगर में रखा। बड़े होने पर दोनों बच्चों में पर्याप्त अन्तर पाया गया। फार्म का बच्चा अशिष्ट, चिन्ताग्रस्त और कम बुद्धिमान था। उसके विपरीत, नगर का बच्चा शिष्ट, चिन्तामुक्त और अधिक बुद्धिमान था।

स्टीफैन्स (Stephens) का विचार है–"इस प्रकार के अध्ययनों से हम यह निर्णय कर सकते हैं कि पर्यावरण का बुद्धि पर साधारण प्रभाव होता है और उपलब्धि पर अधिक विशेष प्रभाव होता है।"

VIII. **बालक पर बहुमुखी प्रभाव**–वातावरण, बालक के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, संवेगात्मक आदि सभी अंगों पर प्रभाव डालता है।

17. विकास को प्रभावित करने वाले वंशानुक्रम एवं वातावरणीय कारक (Environmental and Heredity Factors Affecting of Development)

बालक के विकास को प्रमुख रूप से आनुवंशिकता तथा वातावरण प्रभावित करते हैं। इसी प्रकार कुछ विभिन्न कारक और भी हैं, जो बालक के विकास में या तो बाधा पहुँचाते हैं या विकास को अग्रसर करते हैं। ऐसे प्रभावी कारक निम्नलिखित हैं–

I. वंशानुक्रम कारक

इस सन्दर्भ में **डिक मेयर** लिखते हैं कि वंशानुगत कारक जन्मगत विशेषताएँ होती हैं जो कि बालक के अन्दर जन्म से ही पायी जाती हैं। वंशानुगत कारकों का प्रभाव जीवन के प्रारम्भ के समय से अर्थात् गर्भाधान के समय ही नहीं अपितु जीवन–पर्यन्त चक्र के अन्तर्गत चलता है। माता के रज एवं पिता के वीर्य की भूमिका वंशानुक्रम को निर्धारित करती है। प्राणी के विकास में वंशानुगत शक्तियाँ प्रधान तत्व होने के कारण प्राणी के मौलिक स्वभाव एवं उसके जीवन–चक्र की गति को नियंत्रित करती हैं। इन वंशानुक्रम तत्वों को प्राणी की संरचना एवं क्रियात्मकता से सम्बन्धित सम्पत्ति समझना चाहिए क्योंकि इन्हीं तत्वों की सहायता से प्राणी अपने विकास की जन्मजात एवं अर्जित क्षमताओं का उपयोग कर पाता है। प्राणी का रंग–रूप, लम्बाई, अन्य शारीरिक विशेषताएँ, बुद्धि, तर्क, स्मृति तथा अन्य मानसिक योग्यताओं का निर्धारण वंशानुक्रम द्वारा ही होता है।

II. वातावरणीय कारक

(i) **पारिवारिक प्रभाव (Family Effect)**–बालक के विकास पर उसके लालन-पालन तथा माता-पिता की आर्थिक स्थितियाँ प्रभाव डालती हैं। परिवार की परिस्थितियों तथा दशाओं का बालक के विकास पर सदैव प्रभाव पड़ता है। बालक के लालन-पालन में परिवार का अत्यधिक महत्व होता है। बालक के जन्म से किशोरावस्था तक उसका विकास परिवार ही करता है। स्नेह, सहिष्णुता, सेवा, त्याग, आज्ञापालन एवं सदाचार आदि का पाठ परिवार से ही मिलता है। परिवार मानव के लिये एक अमूल्य संस्था है।

रूसो के अनुसार–''बालक की शिक्षा में परिवार का महत्वपूर्ण स्थान है। परिवार ही बालक को सर्वोत्तम शिक्षा दे सकता है। यह एक ऐसी संस्था है, जो मूलरूप से प्राकृतिक है।''

फ्रॉबेल ने घर को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। उनके अनुसार ''माताएँ आदर्श अध्यापिकाएँ हैं और घर द्वारा दी जाने वाली अनौपचारिक शिक्षा ही सबसे अधिक प्रभावशाली और स्वाभाविक है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि बालक के विकास में परिवार एक अहम संस्था की भूमिका अदा करता है। बालक के लालन-पालन में परिवार के शैक्षणिक कार्य निम्नलिखित हैं–

(a) परिवार बालक की मानसिक एवं भावात्मक प्रवृत्ति के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यदि परिवार का वातावरण वैज्ञानिक या साहित्यिक है तो बालक का झुकाव वैसा ही होगा।

(b) मॉण्टेसरी के अनुसार सीखने का प्रथम स्थान माँ की गोद है। बालक की सभी मूल-प्रवृत्तियों का शोधन धीरे-धीरे परिवार के सदस्यों द्वारा ही होता रहता हे।

(c) परिवार बालक में स्वस्थ आदतों के निर्माण में सहायक होता है। बाल्यावस्था से किशोरावस्था तक बालक कुछ न कुछ आदतें परिवार में रहकर अन्य सदस्यों से सीखता है।

(d) अनुकूलन का पाठ बालक परिवार से ही सीखता है क्योंकि परिवार के सदस्य एक दूसरे से समायोजन कर अपनी समस्याएँ हल करते हैं।

(e) परिवार बालक के सामाजीकरण का आधार है। बालक स्वयं सामाजिक जीवन की क्रियाओं तथा सामाजिक गुणों को यहीं से सीखता है।

(f) बालक को व्यावहारिक जीवन की शिक्षा भी परिवार से ही मिलती है।

(g) परिवार में रहकर बालक अपने बड़ों के प्रति सम्मान का भाव तथा आज्ञापालन की भावना को ग्रहण करता है। परिवार के सभी सदस्यों से वह कर्त्तव्यपरायणता, आत्मसंयम तथा अनुशासन की शिक्षा प्राप्त करता है।

इस प्रकार बालक के लालन-पालन में परिवार का योगदान सराहनीय है।

(ii) सामाजिक वातावरण एवं उसका प्रभाव (Social Environment and Its Effect)–बालक को प्रभावित करने में परिवार का वातावरण अपनी भूमिका का निर्वहन करता है। समाज द्वारा बालकों पर विभिन्न प्रकार के प्रभाव पड़ते हैं। विद्यालय में अनेक परिवारों से आये बालक अपने साथ अलग-अलग वातावरणीय सोच लेकर आते हैं। परन्तु विद्यालय का वातावरण एक सुनिश्चित, अनुशासित एवं शिक्षा हेतु संगठित वातावरण होता है। कहीं-कहीं तो बाहर का वातावरण विद्यालय के वातावरण से पूर्णतः विरोधी होता है। हमारा देश विविधताओं का देश है। जैसे–भाषा की विविधता, सम्प्रदाय तथा जाति की विविधता, साधनहीन तथा सम्पन्नता की विविधता हमारे बाहरी वातावरण की मुख्य समस्याएँ है। इन सभी वातावरणीय समस्याओं से निकलकर जब बालक विद्यालय में अध्ययन करने आता है तब समस्त कठिनाइयाँ विद्यालय को झेलनी पड़ती हैं तथा उनका समाधान खोजना पड़ता है। वैसे वातावरण का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। वातावरण को हम दो भागों में बाँट सकते हैं–

(a) आन्तरिक वातावरण–आन्तरिक वातावरण जन्म से पूर्व ही अपना प्रभाव डालना प्रारम्भ कर देता है। गर्भावस्था बालक के विकास की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण समय है।

(b) बाह्य वातावरण–बालक के बाह्य वातावरण के अन्तर्गत जाति, समाज, राष्ट्र तथा उसकी संस्कृति को लिया जा सकता है। इस प्रकार के वातावरण की परिस्थितियाँ प्रत्येक देश में प्रत्येक काल में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती रहती है। परिवार में यह कार्य माता-पिता अपने बालकों को पूर्ववत् चले आये रीति-रिवाज, भाषा, संस्कृति, साहित्य, जातीय जीवन दर्शन आदि का पाठ व्यवहार द्वारा सिखाते हैं, जबकि विद्यालय बालकों में राष्ट्रीयता एवं मूल्यों का विकास आदि के भाव विकसित करती है। अतः स्पष्ट है कि बालक का स्वभाव, व्यवहार, अभिव्यक्ति, विकास तथा प्रौढ़ता सभी कुछ बाह्य वातावरण से प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकते हैं।

(iii) विद्यालय की आन्तरिक स्थितियों का प्रभाव (Effect of Internal Situations of School)– बालक जब विद्यालय में प्रवेश लेता है तो विद्यालय में अधिक सुलभ साधनों की अपेक्षा रखता है। यहाँ हम उन बिन्दुओं पर चर्चा करेंगे, जिनसे बालक शिक्षा की ओर उन्मुख होता है–

(a) विद्यालय का वातावरण–शिक्षकों का व्यवहार बालको के प्रति अति सरल, सौम्य एवं स्नेहमयी होना चाहिए जिससे बालक को घर की याद न आयें। विद्यालय का भवन, साफ, स्वच्छ तथा सुविधाओं से युक्त होना चाहिए। एक शिक्षक पर बीस या पच्चीस तक बालकों की संख्या होनी चाहिए। एक अच्छे विद्यालय में पठन-पाठन की सामग्री, बालकों के खेलने के सुन्दर खिलौने, बाग-बगीचे आदि भौतिक संसाधन होने चाहिए जिससे बालक विद्यालय के प्रति आकर्षित हो सकें।

(b) समय विभाजन चक्र–विद्यालय में बड़े छात्रों की अपेक्षा छोटे आयु वर्ग के छात्रों के समय विभाजन चक्र में अधिक अन्तर रहता है। छोटे बच्चों की शाला प्रातः 9.30 से 12.30 तक ही संचालित करना चाहिए। इस अवधि में अल्पाहार, विश्राम, स्वास्थ्य निरीक्षण तथा प्रार्थना सभा आदि के लिये समय नियत किया जाये।

(iv) संचार माध्यमों का प्रभाव (Effect of Mass-Media)–मानव समाज में अपने समुदाय एवं अन्य व्यक्तियों के प्रति निरन्तर अन्तः प्रतिक्रियाएँ करता रहता है। इस अन्तः प्रतिक्रिया का व्यापक आधार है–संचार एवं सम्प्रेषण। संचार पर ही सभी प्रकार के मानव सम्बन्ध आधारित होते है। संचार की प्रक्रिया सामाजिक एकता एवं सामाजिक संगठन की निरन्तरता का आधार है। इसके विकास एवं विभिन्न समाजों के मध्य संचार की स्थापना पर सामाजिक प्रगति निर्भर करती है। जिस देश में जितने प्रबल एवं अत्याधुनिक संचार साधन उपलब्ध हैं, वह देश उतना ही अधिक विकसित कहा जाता है।

इस प्रकार जब एक व्यक्ति या अनेक व्यक्तियों के द्वारा सूचनाओं के आदान-प्रदान का कार्य व्यापक स्तर पर होता है तब यह प्रक्रिया 'जन-संचार' कहलाती है। संचार एवं जन-संचार के अन्तर का स्पष्टीकरण टेलीफोन तथा रेडियो के उदाहरण से समझा जा सकता है। जब एक व्यक्ति टेलीफोन पर दूसरे व्यक्ति से बात

करता है तो यह संचार है, लेकिन जब वही व्यक्ति रेडियो पर अपनी बात असंख्य लोगों से कहता है तो इसे जन-संचार कहते हैं।

जनसंचार के माध्यम (Media of Mass Communication)—इसमें ऐसे माध्यम भी शामिल हैं, जो जनसंचार के आधुनिक साधनों का उपयोग करते हैं जैसे-रेडियो, टेलीविजन, सिनेमा, समाचार-पत्र और विज्ञापन आदि। भारत में सूचना और प्रसारण मन्त्रालय के पास जन-संचार की व्यापक व्यवस्था है, जिसके क्षेत्रीय तथा शाखा कार्यालय सम्पूर्ण देश में फैले हुए हैं।

कक्षा-कक्ष में जनसंचार माध्यमों की उपयोगिता—कक्षीय परिस्थितियों में अधिकतम शिक्षण अधिगम की प्रभावशाली परिस्थितियाँ उत्पन्न करने के लिए शिक्षा तकनीकी के जनसंचार माध्यमों का प्रयोग एक उत्तम साधन है। हमारे देश के विद्यालयों में कुछ नवीन विधियों जैसे—फिल्म, फिल्म-पट्टिकाएँ, प्रोजेक्टर, रेडियो आदि का प्रयोग किया जाने लगा है। इसी प्रकार रेडियो पाठों का विद्यालय पाठ्यक्रम में विधिवत् प्रयोग किया जाना चाहिए।

(a) रेडियो का प्रभाव—रेडियो संचार माध्यमों के अन्तर्गत एक प्रभावशाली श्रव्य साधन है। रेडियो पर शैक्षिक पाठों के प्रसारण से दूर-दराज के बालकों को अत्यधिक लाभ पहुँचता है। इसके अन्तर्गत कुशल अध्यापकों के शिक्षण पाठ, भाषण एवं अन्य ज्ञान वृद्धि सम्बन्धित कहानियाँ/नाटक आदि होते हैं।

(b) दूरदर्शन का प्रभाव—आधुनिक युग में दूरदर्शन सम्प्रेषण संचार क्रिया का एक शक्तिशाली माध्यम है। इसमें श्रवण तथा दृश्य सम्बन्धी इन्द्रियों का प्रयोग होता है। इसमें किसी भी घटना को फिर से रिकार्ड कर देखने तथा सुनने की व्यवस्था होती है। इसे चलाने तथा बन्द करने की क्रिया भी सरल है। शैक्षिक दूरदर्शन, छात्रों को प्रेरित करने में, उनकी सृजनात्मक क्षमता को बढ़ाने में तथा उच्च स्तरीय शिक्षण प्रदान करने सहायता प्रदान करता है।

(c) कम्प्यूटर का प्रभाव—शिक्षा में कम्प्यूटर का उपयोग विज्ञान की महान उपलब्धि है। इसके द्वारा जन-शिक्षा, स्वास्थ्य, राष्ट्रीय-एकता की शिक्षा आदि को सफलतापूर्वक प्रदान किया जा रहा है। कम्प्यूटर के माध्यम से सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन सम्भव हो पाया है। आज कम्प्यूटर एक विषय के रूप में कक्षाओं में पढ़ाया जाता है जिससे छात्रों को देश-विदेश से सम्बन्धित किसी भी सूचना की जानकारी कुछ क्षणों में ही प्राप्त हो जाती है।

परीक्षोपयोगी महत्त्वपूर्ण प्रश्न

1. मानव–विकास का प्रारम्भ होता है–
(A) पूर्व–बाल्यावस्था से
(B) उत्तर–बाल्यावस्था से
(C) शैशवावस्था से
(D) गर्भावस्था से
UPTET पेपर-I (I to V): 8-01-2020

2. बच्चे की वृद्धि मुख्यतः सम्बन्धित है–
(A) सामाजिक विकास से
(B) भावात्मक विकास से
(C) नैतिक विकास से
(D) शारीरिक विकास से
UPTET पेपर-I (I to V): 8-01-2020

3. निम्न में से कौन–सा संज्ञानात्मक क्षेत्र से सम्बन्धित नहीं है?
(A) अनुप्रयोग (B) बोध
(C) ज्ञान (D) अनुमूल्यन
UPTET पेपर-I (I to V): 8-01-2020

4. विकास की किस अवस्था को कोल तथा ब्रूस ने "संवेगात्मक विकास का अनोखा काल" कहा है?
(A) बाल्यावस्था (B) प्रौढ़ावस्था
(C) किशोरावस्था (D) शैशवावस्था
UPTET पेपर-I (I to V): 8-01-2020

5. किसी भी नयी भाषा को सीखने के लिए कहाँ से प्रारम्भ किया जाना चाहिए ?
(A) अक्षरों व शब्दों के मध्य साहचर्य से
(B) वाक्यों के निर्माण से
(C) शब्दों के निर्माण से
(D) उपर्युक्त में से कोई नहीं
UPTET पेपर-I (I to V): 18-11-2018

6. निम्न में से कौन-सा संवेग का तत्त्व नहीं है ?
(A) व्यवहारात्मक (B) दैहिक
(C) संज्ञानात्मक (D) संवेदी
UPTET पेपर-I (I to V): 18-11-2018

7. संज्ञानात्मक क्षेत्र का सही क्रम है–
(A) ज्ञान–अनुप्रयोग–अवबोध–विश्लेषण –संश्लेषण–मूल्यांकन
(B) मूल्यांकन–अनुप्रयोग–विश्लेषण– संश्लेषण–अवबोध–ज्ञान
(C) मूल्यांकन-संश्लेषण-विश्लेषण-अनुप्रयोग-अवबोध-ज्ञान
(D) ज्ञान-अवबोध-अनुप्रयोग-विश्लेषण-संश्लेषण-मूल्यांकन
UPTET पेपर-I (I to V): 18-11-2018

8. निम्न में से कौन-सी बाद की बाल्यावस्था के बौद्धिक विकास की विशेषता नहीं है ?
(A) भविष्य की योजना की सूझ-बूझ
(B) विज्ञान की काल्पनिक कथाओं में अधिक रुचि
(C) बढ़ती हुई तार्किक शक्ति
(D) काल्पनिक भयों का अन्त
UPTET पेपर-I (I to V): 18-11-2018

9. इनमें से कौन मनोवैज्ञानिक 'भाषा विकास' से सम्बद्ध है ?
(A) पावलॉव (B) बिने
(C) चॉमस्की (D) मास्लो
UPTET पेपर-I (I to V): 18-11-2018

10. गिरोह अवस्था किस आयु-वर्ग एवं विलम्ब-विकास से सम्बन्धित है ?
(A) 16–19 वर्ष एवं नैतिकता
(B) 3–6 वर्ष एवं भाषा
(C) 8–10 वर्ष एवं समाजीकरण
(D) 16–19 वर्ष एवं संज्ञानात्मक
UPTET पेपर-I (I to V): 18-11-2018

11. संज्ञानात्मक सम्प्राप्ति का न्यूनतम स्तर है–
(A) ज्ञान (B) बोध
(C) अनुप्रयोग (D) विश्लेषण
UPTET पेपर-I (I to V): 15-10-2017

12. निम्न में से कौन–सा शारीरिक विकास का एक प्रमुख नियम है ?
(A) मानसिक विकास से भिन्नता का नियम
(B) अनियमित विकास का नियम
(C) द्रुतगामी विकास का नियम
(D) कल्पना और संवेगात्मक विकास से सम्बन्ध का नियम
UPTET पेपर-I (I to V): 15-10-2017

13. बच्चों के सामाजिक विकास को प्रभावित करने वाले कारक हैं–
(A) आर्थिक तत्त्व
(B) सामाजिक परिवेशजन्य तत्त्व
(C) शारीरिक तत्त्व
(D) वंशानुगत तत्त्व

UPTET पेपर-I (I to V): 15-10-2017

14. निम्न में से कौन–सा विकास का सिद्धान्त नहीं है ?
(A) अनुकूलित प्रत्यावर्तन का सिद्धान्त
(B) निरन्तर विकास का सिद्धान्त
(C) परस्पर सम्बन्ध का सिद्धान्त
(D) समान प्रतिमान का सिद्धान्त

UPTET पेपर-I (I to V): 15-10-2017

15. "विकास के परिणामस्वरूप नवीन विशेषताएँ और नवीन योग्यताएँ प्रकट होती हैं।" यह कथन किसने दिया है ?
(A) गेसेल
(B) हरलॉक
(C) मेरेडिथ
(D) डगलस और होलैण्ड

UPTET पेपर-I (I to V): 15-10-2017

16. 'विद्रोह की भावना' की प्रवृत्ति निम्न में से किस अवस्था से सम्बन्धित है?
(A) बाल्यावस्था (B) शैशवावस्था
(C) पूर्व किशोरावस्था (D) मध्य किशोरावस्था

UPTET पेपर-I (I to V): 15-10-2017

17. विकास की किस अवस्था में बुद्धि का अधिकतम विकास होता है?
(A) बाल्यावस्था (B) शैशवावस्था
(C) किशोरावस्था (D) प्रौढ़ावस्था

18. शिशु का अधिकांश व्यवहार आधारित होता है।
(A) मूल प्रवृत्ति पर (B) नैतिकता पर
(C) वास्तविकता पर (D) ध्यान

19. निम्नलिखित में से कौन–सा वृद्धि और विकास के सिद्धान्तों से सम्बन्धित नहीं है?
(A) निरन्तरता का सिद्धान्त
(B) वर्गीकरण का सिद्धान्त
(C) समन्वय का सिद्धान्त
(D) वैयक्तिकता का सिद्धान्त

20. बाल मनोविज्ञान का क्षेत्र है–
(A) केवल शैशवावस्था की विशेषताओं का अध्ययन
(B) केवल गर्भावस्था की विशेषताओं का अध्ययन
(C) केवल बाल्यावस्था की विशेषताओं का अध्ययन
(D) गर्भावस्था से किशोरावस्था की विशेषताओं का अध्ययन

21. बुद्धि एवं सृजनात्मकता में किस प्रकार का सहसम्बन्ध पाया गया है ?
(A) धनात्मक (B) ऋणात्मक
(C) शून्य (D) ये सभी

22. शारीरिक वृद्धि और विकास को कहते हैं–
(A) तत्परता (B) अभिवृद्धि
(C) गतिशीलता (D) आनुवंशिकता

23. 'चिन्तन संज्ञानात्मक पक्ष में एक मानसिक क्रिया है।' यह कथन दिया गया है–
(A) डीवी द्वारा (B) गिल्फर्ड द्वारा
(C) क्रूज द्वारा (D) रॉस द्वारा

24. बाल मनोविज्ञान के आधार पर कौन–सा कथन सर्वोत्तम है ?
(A) सारे बच्चे एक जैसे होते हैं
(B) कुछ बच्चे एक जैसे होते हैं
(C) कुछ बच्चे विशिष्ट होते हैं
(D) प्रत्येक बच्चा विशिष्ट होता है

25. बाल मनोविज्ञान का केन्द्र बिन्दु है–
(A) अच्छा शिक्षक (B) बालक
(C) शिक्षण प्रक्रिया (D) विद्यालय

26. बाल विकास में–
(A) प्रक्रिया पर बल है
(B) वातावरण और अनुभव की भूमिका पर बल है
(C) गर्भावस्था से किशोरावस्था तक का अध्ययन होता है
(D) उपर्युक्त सभी पर

27. बाल विकास का अध्ययन क्षेत्र है–
(A) बाल विकास की विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन
(B) वातावरण का बाल विकास पर पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन
(C) वैयक्तिक विभिन्नताओं का अध्ययन
(D) उपर्युक्त सभी

28. संवेगात्मक विकास को प्रभावित करने वाले कारक हैं–
(A) शारीरिक स्वास्थ्य
(B) मानसिक योग्यता
(C) थकान
(D) उपर्युक्त सभी

29. सामान्य संयुक्त कोशिका में गुणसूत्रों के जोड़े होते हैं–
(A) 22 (B) 23
(C) 24 (D) इनमें से कोई नहीं

UPTET पेपर-I (I to V): 15-10-2017

30. वह अवस्था जोकि माता के 21वें गुणसूत्र जोड़े के अलग न हो पाने के कारण होती है, कहलाती है।
(A) डाउन्स सिण्ड्रोम
(B) क्लीनफेल्टर सिण्ड्रोम
(C) टर्नर सिण्ड्रोम
(D) विल्सन सिण्ड्रोम

UPTET पेपर-I (I to V): 15-10-2017

31. निम्नलिखित में से कौन–सा एक सही क्रम है?
(A) अण्डाणु–शुक्राणु, ब्लास्टोसिस्ट, युग्मनज
(B) ब्लास्टोसिस्ट, अण्डाणु–शुक्राणु, युग्मनज
(C) ब्लास्टोसिस्ट, युग्मनज, अण्डाणु–शुक्राणु
(D) अण्डाणु–शुक्राणु, युग्मनज, ब्लास्टोसिस्ट

UPTET पेपर-I (I to V): 15-10-2017

32. निम्न में से कौन–सी एक अन्तःस्रावी ग्रन्थि नहीं है?
(A) एड्रिनल ग्रन्थि (B) पीयूष ग्रन्थि
(C) लार ग्रन्थि (D) थायरॉइड ग्रन्थि

UP-TET -(VI to VIII) : 15.08.2017

33. बच्चे के संज्ञानात्मक विकास हेतु उत्तम स्थान है–
(A) खेल का मैदान
(B) सभागार
(C) घर
(D) विद्यालय एवं कक्षा का वातावरण

34. विकास के किस काल को 'अत्यधिक दबाव और तनाव का काल' कहा गया है?
(A) किशोरावस्था (B) प्रौढ़ावस्था
(C) मध्यावस्था (D) वृद्धावस्था

35. निम्नलिखित में से कौन–सा कथन सही नहीं है?
(A) वंशानुक्रम माता–पिता से सन्तान में गुणों का संचरण है
(B) विकास प्राणी और उसके पर्यावरण की अन्तर्क्रिया का परिणाम है
(C) वंशानुक्रम व्यक्ति की जन्मजात विशेषताओं का शोधन है
(D) माता–पिता की शारीरिक और मानसिक विशेषताओं का सन्तानों में संचरित होना वंशानुक्रम है

36. बालक का विकास परिणाम है–
(A) आर्थिक कारकों का
(B) वंशानुक्रम का
(C) वंशानुक्रम तथा वातावरण की अन्तःप्रक्रिया का
(D) वातावरण का

37. संज्ञानात्मक विकास में वंशानुक्रम निर्धारित करता है–
(A) मस्तिष्क जैसी शारीरिक संरचना के मूलभूत स्वभाव को

(B) सहज प्रतिवर्ती क्रियाओं के अस्तित्व को
(C) शारीरिक संरचना के विकास को
(D) उपर्युक्त सभी

38. मनुष्य में वैयक्तिक विभिन्नता के निर्धारक किससे सम्बन्धित होते हैं ?
(A) वंशानुक्रम तथा वातावरण दोनों में विभिन्नता
(B) वातावरण के साथ अंतर्क्रिया
(C) वंशानुक्रम में विभिन्नता
(D) वंशानुक्रम व वातावरण में अंतर्क्रिया

39. लिंग का निर्धारण होता है–
(A) माता-पिता द्वारा (B) पिता द्वारा
(C) माता द्वारा (D) इनमें से कोई नहीं

40. प्रकृति-पोषण विवाद निम्नलिखित में से किससे सम्बन्धित है ?
(A) वातावरण एवं पालन-पोषण
(B) व्यवहार एवं वातावरण
(C) वातावरण एवं जीव-विज्ञान
(D) आनुवंशिकी एवं वातावरण

41. आनुवंशिकता एक.....सामाजिक संरचना मानी जाती है।
(A) द्वितीयक (B) गतिक
(C) प्राथमिक (D) स्थायिक

42. वंशानुक्रम तथा वातावरण के सम्बन्ध का व्यक्ति की वृद्धि पर प्रभाव निम्न में से एक के अनुसार होता है–
(A) वंशानुक्रम + वातावरण व्यक्ति को प्रभावित करता है
(B) वंशानुक्रम व्यक्ति को प्रभावित करता है
(C) वातावरण व्यक्ति को प्रभावित करता है
(D) वंशानुक्रम–वातावरण व्यक्ति को प्रभावित करता है

43. लड़का पैदा होने के लिए उत्तरदायी क्रोमोसोम्स हैं–
(A) XP (B) CX
(C) XY (D) XX

44. 'प्रकृति-पालन-पोषण' वाद-विवाद के सन्दर्भ में निम्नलिखित कथनों में से कौन-सा आपको उपयुक्त प्रतीत होता है ?
(A) एक बच्चा एक खाली स्लेट के समान होता है जिसका चरित्र परिवेश के द्वारा किसी भी आकार में ढाला जा सकता है
(B) बच्चे आनुवंशिक रूप से उस तरफ प्रवृत्त होते हैं जिस तरफ होना चाहिए, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता है कि वे किस प्रकार के परिवेश में पल-बढ़ रहे हैं
(C) एक बच्चे के व्यवहार का निर्धारण करने में परिवेशीय प्रभावों का बहुत कम महत्व होता है, वह प्राथमिक रूप में आनुवंशिक रूप से निर्धारित होता है
(D) वंशानुक्रम तथा परिवेश अभिन्न रूप से एक-दूसरे से गुँथे हुए हैं और दोनों विकास को प्रभावित करते हैं

45. आनुवंशिकता.....का गठन है।
(A) वातावरण (B) मानसिक
(C) आनुवंशिक (D) मनोवैज्ञानिक

46. विकास पर आनुवंशिकता के प्रभाव की सीमा का सबसे अच्छा वर्णन निम्नलिखित में से किसके द्वारा होता है ?
(A) आनुवंशिकता निर्धारित करती है कि कोई कितना विकसित होगा
(B) आनुवंशिकता निर्धारित करती है कि किसी को कितना विकसित किया जा सकता है
(C) (A) और (B) दोनों
(D) या तो (A) या (B)

47. "विकास कभी न समाप्त होने वाली प्रक्रिया है।" यह कथन विकास के किस सिद्धान्त से सम्बन्धित है?
(A) एकीकरण का सिद्धान्त
(B) अन्तः सम्बन्ध का सिद्धान्त
(C) निरन्तरता का सिद्धान्त
(D) अन्तःक्रिया का सिद्धान्त

UPTET पेपर-I (I to V): 08-01-2020

उत्तरमाला

1. (D)	**2.** (D)	**3.** (D)	**4.** (A)	**5.** (A)
6. (D)	**7.** (D)	**8.** (A)	**9.** (C)	**10.** (C)
11. (A)	**12.** (C)	**13.** (B)	**14.** (A)	**15.** (A)
16. (D)	**17.** (C)	**18.** (A)	**19.** (B)	**20.** (D)
21. (A)	**22.** (B)	**23.** (D)	**24.** (D)	**25.** (B)
26. (D)	**27.** (D)	**28.** (D)	**29.** (B)	**30.** (A)
31. (D)	**32.** (C)	**33.** (D)	**34.** (A)	**35.** (C)
36. (C)	**37.** (A)	**38.** (D)	**39.** (B)	**40.** (D)
41. (D)	**42.** (D)	**43.** (C)	**44.** (D)	**45.** (C)
46. (B)	**47.** (C)			

❑❑